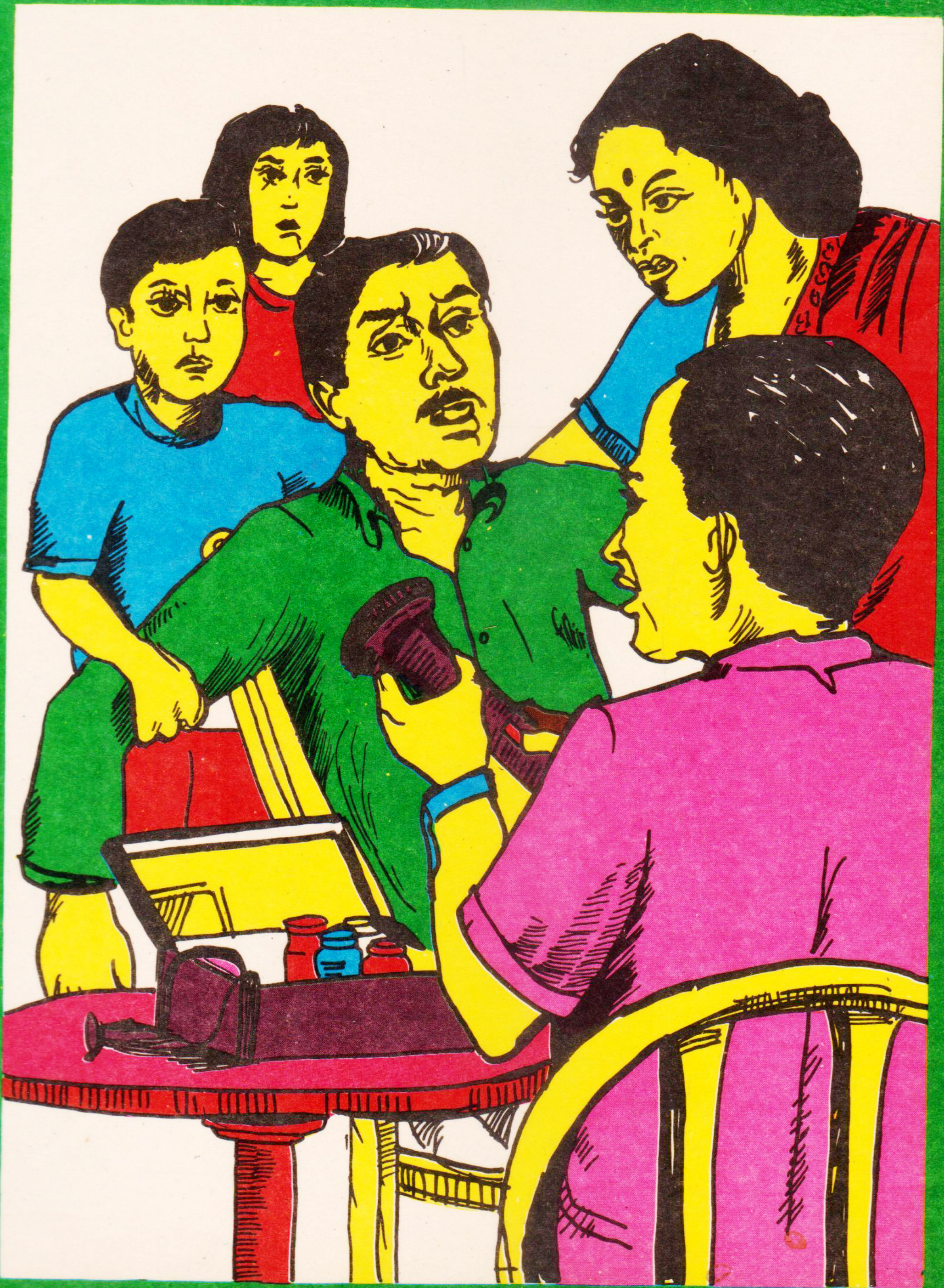
गिनतीलाल की छींक



डॉ० सरोजिनी प्रीतम

गिनतीलाल की छींक

डा० सरोजिनी प्रीतम

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

विषय-सूची

उसका भविष्य

चीकू हरेक पत्र-पत्रिका उठाकर भविष्यवाणी पढ़ने बैठ जाता। उससे सम्बंधित कुछ छपा होता, उसे वह एक कागज पर लिख लेता। फिर विभिन्न भविष्यवाणियों को इकट्ठा करके मिलान करता। सारे सप्ताह की घटनाओं पर गौर करता। और फिर सम्पादकों के नाम चिट्ठी लिखने बैठ जाता। उसने एक सम्पादक को यों लिखा—

"सम्पादकजी, आपके अखबार में मेरा भविष्य छपा था। पूरे सप्ताह में होने वाली घटनाओं से एक भी घटना मेल नहीं खाती। ऐसे-ऐसे भविष्यवक्ता जब भविष्यवाणी लिखेंगे तो देश के भविष्य का क्या होगा। देश के बारे में ऐसी-ऐसी भविष्यवाणियां उसे गुमराह करेंगी। आपके अखबार ने छापा है कि मेरा यह सप्ताह मौज-मस्ती और आनंद से बीतेगा। मैंने आपके द्वारा दी गई भविष्यवाणी को सच मानकर न तो कक्षा की परीक्षा दी और न ही स्कूल गया। मां ने मुझे मेरे जन्म-दिन पर सौ रुपये दिये थे। अतः मैंने अपने मित्रों के साथ हर रोज एक पिक्चर देखी और शाम को पार्टी की। और जानते हैं, क्या परिणाम हुआ ? मेरे अध्यापक ने मेरे पिताजी से मेरी रिपोर्ट कर दी। पिताजी ने मेरी धुनाई की और पूछा, "मुझे रुपये कहां से मिले ?" मैंने बताया कि मां से। उसी दिन से पिताजी ने मां को भी रुपये देने बंद कर दिये और डांटते हुए कहा—"तुम चीकू के भविष्य की दुश्मन हो ?"

बताइये सम्पादक जी, भविष्य का दुश्मन कौन है ? आप या आपका सरासर गलत बताने वाला भविष्यवक्ता। और मेरा पूरा हफ्ता खराब कर देने वाला, रुपया बरबाद करके भी मुझे डांट के तत्ते घूंट पिलाने वाला आपका यह अखबार। जिसमें छपे भविष्य के एक-एक अक्षर को सत्य माननेवाला मैं यानी चीकू पूरा सप्ताह दुःखी-परेशान रहा हूं। अगली बार यदि आप भविष्य छापें भी तो उसमें इतना जरूर छाप दें कि छः सितम्बर को पैदा होने वाले अपने भविष्य को इसमें न ढूंढे—आपका दुखी चीकू।" पूरा खत चीकू ने तीन बार पढ़ा। उसमें फिर सुधार किया और फिर पत्र को एक लिफाफे में डालकर दूसरी पत्रिका के भविष्य पर गौर करने लगा। फिर उसने दूसरे सम्पादक को भी पत्र लिख दिया।

"आपके यहां का भविष्य सचमुच बहुत सुन्दर था। मेरे भविष्य के बारे में आपके भविष्य-वक्ता को इतना पता होगा यह मैं नहीं जानता था। दुखी, उदास व अशान्त सप्ताह बीता। आपके भविष्यवक्ता ने यह भी लिखा है कि मुझे कोई रोग होने की सम्भावना है। मेरे पेट में, सिर में तथा पीठ में कभी-कभी दर्द होता है। कौन-सा दर्द रोग बनेगा यह तो भविष्यवक्ता ने लिखा ही नहीं। अगर यह भी लिख दें तो रोग पहचानना मुश्किल नहीं होगा। आपकी

पत्रिका में लिखित भविष्य का अक्षर-अक्षर मेरे भविष्य से मिलता है। अगले सप्ताह की प्रतीक्षा में हूं—आपका चीकू।"

दोनों खत मोड़कर उसने लिफाफों में डाल दिये। अब एक तीसरा अखबार उठाकर बैठ गया। उसने उसकी हर पंक्ति के नीचे अपने पेन से लकीर खींची। ठीक और गलत के निशान भी लगा दिये। लिखा था, मेहनत और लगन से असफल काम भी सिद्ध हो जाएंगें। मेहनत ही आपकी पूंजी रहेगी। जब-जब आप इसे खर्च करेंगें, तब-तब यह आपको अभूत-पूर्व सफलता प्रदान करेगी।

चीकू ने इन पंक्तियों के बारे में लिखा, "ये पंक्तियां प्रकाशित करके आपने अपने अखबार के कागज को बर्बाद ही किया है। ऐसी-ऐसी हिदायतें देकर आप इस कालम का नाम 'हिदायतें' ही रख देते तो बेहतर था।"

चीकू ने फिर उस सम्पादक को ढेरों हिदायतें लिखीं और लिखते-लिखते उसे नींद आ गई।



तभी चीकू की मां उसके पास आईं। ढेरों चिट्ठियां, लिफाफे और अध-लिखे खत व अखबारों के भविष्य-स्तम्भ के कागज देखकर बैठ गईं। फिर एक-एक करके पढ़ने लगी। चीकू के खतों को पढ़कर वह हैरान रह गईं।

उसने एक-एक खत को ध्यान से पढ़ा। फिर उसे ध्यान हो आया कि किसी समय तो चीकू बड़ी मेहनत और लगन से काम करता था और आजकल मौज-मस्ती के साथ समय बिताता है और स्कूल भी नहीं जाता है। अब उसकी मां को सारी बातें समझ में आ गईं। अगले दिन चीकू फिर उठा तो मां से बोला, "मुझे कोई बीमारी होने वाली है। देखो न मेरे पांव पर यह छोटी-छोटी फुंसियां हो रही हैं। दायां हाथ भी दर्द कर रहा है।"

मां ने उसे प्यार से समझाते हुए कहा, "तूने जरूर अरुणा पत्रिका में अपना भविष्य पढ़ा होगा। कल तुम्हारा दोस्त मुन्नू भी यही कह रहा था। उसका भविष्य भी यही छपा है। असल में यह भविष्य छोटे बच्चों के लिए नहीं होता। बच्चे तो खुद देश का भविष्य होते हैं। अरे बेटा! पूरे महीने में पैदा होने वाले हजारों-लाखों लोगों का भविष्य एक समान कैसे हो सकता है। यह तो हर पल, हर घड़ी के साथ बदलता रहता है। जो जिस घड़ी में पैदा हुआ है, उसके अनुसार उसका भविष्य होता है और फिर भविष्य बनाने के लिए कर्म करना पड़ता है। तुम जब तक पढ़-लिखकर अपना कर्म नहीं करते, मेहनत लगन से नहीं पढ़ते, तब तक तुम्हारे भविष्य का किसे पता चलेगा। पहले तुम्हें भविष्य की नींव डालनी होगी। नींव जितनी मजबूत होगी, भविष्य उतना ही सुन्दर होगा।"

"अच्छा!" कहकर चीकू ने झटपट सारी चिट्ठियां समेट लीं, और कागजों की कतरनें छुपा दीं। फिर मां से बोला, "अच्छा तो मां, मैं जिस घड़ी में पैदा हुआ था वह घड़ी तो ला देना।"

'हां-हां' कहकर चीकू की मां ने उसे एक नई घड़ी ला दी और बोली, "यह ले। यही है वह शुभ घड़ी, चीकू! अगर तू अपना समय फिजूल की बातों में बर्बाद करेगा तो यह घड़ी बन्द हो जायेगी। तुझे बड़ा बनना है तो मेहनत को ही अपना सब कुछ मानकर जी-जान से पढ़-लिख बेटा।"

चीकू ने घड़ी बांध ली है। अपने सारे दोस्तों को अब वह कहता है कि वे अपनी-अपनी अम्मा से शुभ घड़ी का पता जरूर पूछें, जिसमें वे पैदा हुए थे। लेकिन सिवाय चीकू के और किसी को भी अभी वह घड़ी पता नहीं चली। चीकू अपने भविष्य का समय इसी घड़ी पर देखता है और समय की भागती गति को देखकर फिर अपने काम में जुट जाता है।

खुशीलाल

किसी नगर में खुशीलाल नाम का एक वीर सैनिक रहता था। उसने अपने देश की रक्षा का कई बार बीड़ा उठाया और चाहा कि वह किसी तरह भी देश के काम आ सके। बचपन में जब मास्टरजी उसे पढ़ाते थे और देश पर अंग्रेजों के अत्याचार करने की बात बताते तो उसका खून खौल उठता था। लेकिन मास्टरजी कहते-"अभी तुम लोगों को विद्या ग्रहण करनी है। यही तुम्हारा क्षेत्र है, जहां तुम्हें मोर्चा लेना है।" खुशीलाल पढ़-लिखकर सेना में भर्ती हो गया। लेकिन एक दुर्घटना में उसकी टांग कट गई। उसके माता-पिता की पहले ही मृत्यु हो चुकी थी। इस हालत में वह अपने मामा नेकीराम के घर आ पहुंचा। नेकीराम ने खुशीलाल को सहारा दिया और छोटे-मोटे काम दे दिये जिन्हें वह घर बैठे ही कर सके। लेकिन खुशीलाल ने मन में ठान लिया था कि वह कोई ऐसा काम अवश्य करेगा जिससे देश का नाम रोशन हो। उसका अपना नाम अमर हो। वह हर समय नई तरकीबें सोचता। एक दिन



बैठे-बैठे उसे ध्यान आया कि अब देश आजाद है, लड़ाई नहीं होगी। शहीद होने का या देश को आजाद कराने वाला मौका तो हाथ से निकल गया। अब क्या किया जाए? कहीं ऐसी लड़ाई हो जिससे लोगों में एक-दूसरे को मार-काट डालने की भावना आ जाये। यही सोचकर उसने लाठी के सहारे एक-दूसरे के घर में तांक-झांक शुरू कर दी और देखा उनकी गली में एक ही नल है, जिससे सब एक साथ पानी भरने आते हैं। गली-भर में लोग इतने निरीह हैं कि जहां लड़ने की नौबत आ सकती है वहां भी नहीं लड़ते। सब एक साथ मिलकर रहते हैं। किसी को किसी से कोई शिकायत ही नहीं। खुशीलाल को सब में ऐसी एकता की भावना देख कर मन-ही-मन बहुत अच्छा लगा। वह सोचने लगा-अब हमारे देश पर कोई आक्रमण नहीं कर सकता।

उन्हीं दिनों खुशीलाल के पास वाले मकान में चमड़े का एक नया काम शुरू हो गया। बहुत से डिब्बे भर-भर कर लाये जाते और उस घर को गोदाम बनाते जाते। खुशीलाल को जैसे शक-सा हुआ। उसने वहां तांक-झांक शुरू कर दी और लाठी टेकता हुआ वह अक्सर उस मकान वालों के पास जा बैठता। पोकर और शूलिल नाम के दो कर्ता-धर्ता थे। खुशीलाल ने उनसे दोस्ती का हाथ बढ़ाया और उनके काम के बारे में पूछा। वे बोले, 'हम यहां काली चमड़ी को गोरी चमड़ी बनाने का कारखाना खोल रहे हैं।"

"वाह! तब तो मेरी चमड़ी भी गोरी हो सकती है," खुशीलाल ने हंसकर कहा।

"हां-हां, तुम्हारे पूरे देश की चमड़ी गोरी बना देंगे, मैन। देखो तो सामने। इस चमड़े पर एक मसाला लगाकर उसे थोड़ी देर सेंक देना होता है, रंग-रूप बदल जाता है। यह एक खास मसाला हैं। इसमें बारूद है और रंग उड़ाने वाले सारे मसाले भी हैं," पोकर ने कहा। खुशीलाल के चेहरे का रंग उड़ने लगा तो शूलिल बोला, 'तुम हमारे साथ दोस्ती का हाथ बढ़ाओ। हम तुम्हारी मदद करेंगे। सब को गोरा बना देंगे और तुम्हें भी...।"

"हां-हां, क्यों नहीं" कहते हुए खुशीलाल ने पोकर और शूलिल से दोस्ती कर लेने में ही अपनी खैर समझी।

उसने देखा पोकर और शूलिल अपने घर के नीचे बने हुए तहखाने में बारूद जमा करते चले जा रहे हैं। रात-रात भर वहां कुछ अजनबी आते हैं। जमीन खोद-खोद कर बहुत नीचे कुछ नये गोदाम तैयार किये जा रहे हैं। खुशीलाल यह सब देखकर बहुत बेचैन था। उसने अपने मामा नेकीराम से एक दिन बात की, तो उसके मामा हंस पड़े और बोले, "पिछले दस साल से हम यहां रह रहे हैं, कभी कुछ नहीं हुआ। असल में तुम पर यह जो देश-सेवा का भूत सवार है न, यही हर समय तुम्हें ऊल-जलूल सोचने पर मजबूर करता है।" नेकीराम ने खुशीलाल की किसी बात की तरफ ध्यान न दिया।

खुशीलाल ने अब पोकर और शूलिल के पास जाकर घंटों बैठना शुरू कर दिया। आखिर एक दिन वह बोला, "पोकर, तुम्हारे यहां तो रोज़ खुदाई होती है।"

"हां-हां," पोकर बोला। और कहा, "आओ तुम्हें नीचे की जगह दिखाने ले चलें। आहिस्ता-आहिस्ता चलना, तुम्हारा एक ही पांव है न, आओ।" चलते-चलते सहसा खुशीलाल का पांव किसी चीज से अटका और वह धड़ाम से एक गड्ढे में जा गिरा। उसे पोकर और शूलिल की आवाजें सुनाई दीं, "चलो एक जासूस तो कैद हो गया। अब बस्तीपुर की इस चौकी पर हमारा कब्जा होने में देर नहीं। बारूद, हथगोले सब जमा हैं। यहां के सब लोगों की खाल अब भुन-भुन कर लाल हो जायेगी। हा-हा, हा-हा। दो ही दिन में इस तहखाने पर ज़रा-सी माचिस की तीली जलाने की देर है और सारा बस्तीपुर हमारे कब्जे में।"

हंसी और ठहाकों की आवाजें खुशीलाल पर बिजली की तरह टूट रही थीं। उसे शक तो पहले से ही था। उसने मामा से बात भी की थी, लेकिन उसकी बात किसी ने नहीं सुनी थी। वह वहीं गड्ढे में पड़ा रहा। सहसा उसके मन में वह देश-प्रेम, वही देश-सेवा की भावना ठाठें मारने लगी। उसने सोचा, अच्छा होगा अगर इस तहखाने में आग लगा दी जाये। तभी उसे ध्यान आया कि सबसे पहले तो वह ही मरेगा और उसका शरीर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा। और फिर किसी को पता भी नहीं लगेगा कि उसने ही यह इतना बड़ा जोखिम का काम किया। अगर वह किसी को बता देता तो कम-से-कम उसका नाम देश के अमर शहीदों में तो होता।

लेकिन पोकर और शूलिल की हंसी और ठहाकों की आवाज के नीचे खुशीलाल की अमरता का सपना टूट-सा गया। बार-बार आवाज आती, 'बस्तीपुर विदेशियों के कब्जे में आ जायेगा! हे भगवान! कहते-कहते खुशीलाल के मन से अपनी मौत का भय जाता रहा। अपनी अमरता का वह भूत उतर गया। उसने अपनी जेब से माचिस निकाली, बड़े इत्मीनान से होठों से सिगरेट लगाई और माचिस जला दी। पल-भर में ही भयानक विस्फोट हुआ कि पूरा तहखाना तोपखाना बन गया। पोकर, शूलिल, उनके दूसरे जासूस, योजनाओं की सारी फ़ाइलें और उनका मुखिया सब जलकर राख हो गये।

नेकीराम जब रात को अपने घर वापस आया तो उसके अपने मकान की भी धज्जियां उड़ चुकी थीं। पुलिस ने घेराव कर रखा था। नेकीराम को अब खुशीलाल की बात का ध्यान हो आया और उसकी आखें छलक आईं। सारे सामान को जब टटोला गया तो इसमें से एक डायरी मिली। जिसके सारे पन्ने जल चुके थे, सिर्फ एक पृष्ठ पर लिखा था, 'देश सेवा का भूत मुझ पर सवार हो रहा है। मैं बस्तीपुर को विदेशियों के हाथों नहीं जाने दूंगा। भूत बनकर इन सबको नचा दूंगा'—खुशीलाल। नेकीराम खुशीलाल की डायरी को चूमने लगे। फिर उसने उन पृष्ठों से अपना मुंह हटा लिया, क्योंकि उसकी आंखों से अश्रुधारा बहने लगी थी।

संपतलाल

चंपतलाल को हर समय यही लगता था कि उसके पास वाला दर्जी संपतलाल औरों के कपड़े काट-काटकर अपने बाल-बच्चों के कपड़े सो देता है। वह संपतलाल पर कड़ी नजर रखता।

एक दिन संपतलाल दर्जी की बेटी रीना फ्राक पहनकर जा रही थी। चंपतलाल को याद आया कि वह कपड़ा तो उसने अपनी बेटी के फ्राक के लिए दिया था। ओह! इसका मतलब कपड़ा इतना ज्यादा था कि इस कम्बख्त ने अपनी बेटी के लिए भी उसमें में फ्राक बना दिया।

उसने मन-ही-मन दर्जी को रंगे हाथ पकड़ने की सोची। वह हर समय उसकी हरकतों पर आंख गड़ाये रहता। संपतलाल के बेटे-बेटी या पत्नी जो भी कपड़े पहनते वह गली मुहल्ले



में जाकर सबसे कह आता, "देखो तो कहीं संपतलाल ने तुम्हारे कपड़ों में से तो कपड़े नहीं बनवाये।" अब तो चंपतलाल के साथ गलीवाले भी संपतलाल के पीछे हाथ धोकर पड़ गये।

गली-मुहल्ले के लोगों ने मिल बैठकर सलाह की। फिर उन्होंने अपनी गली के सबसे मूर्ख व्यक्ति धुनिया से कहा, "तुम्हें जासूस की तरह संपतलाल पर कड़ी नजर रखनी होगी। उसे रंगे हाथों पकड़ना होगा।"

धुनिया ने सिर हिला दिया और संपतलाल के आगे-पीछे रहने लगा।

एक दिन की बात है, संपतलाल किसी काम में व्यस्त था कि धुनिया चिल्लाया, "पकड़ लिया, पकड़ लिया, रंगे हाथों पकड़ लिया।"

एं ! संपतलाल चौंक गया। वह उस समय कमीज की रंगाई कर रहा था। जब उसके रंगे हाथों को देखकर धुनिया चिल्लाया तो गली के सारे लोग भागे आए। चंपतलाल तेजी से संपतलाल के पास आया लेकिन उसके रंगे हाथों को देखकर चुप रह गया। गली के लोग भी उल्टे पांव लौट पड़े। चंपतलाल ने धुनिया को बुरी तरह डांटा और संपतलाल के सिर पर खूबसूरत टोपी पहने देखकर बोला, "वाह ! बढ़िया टोपी है तुम्हारी धोती के साथ की। मेरे पास भी कपड़ा तो पड़ा है। सोच रहा हूं, टोपी बनवा लूं।"

"हां-हां जरूर। टोपी तो मैं दो घंटे में ही बना देता हूं, बनवाने के भी सिर्फ दो रुपये लेता हूं।" संपतलाल बोला। चंपतलाल घर जाकर कपड़ा ले आया।

संपतलाल ने कपड़ा खोलकर देखा और बोला, "वाह ! बड़ी सुन्दर टोपी बनेगी।" चंपतलाल ने कहा, "मैं सोचता हूं दो टोपियां बनवा लूं।"

संपतलाल ने सिर हिला दिया।

चंपतलाल को लगा कि जब दो टोपियां बन सकती हैं तो ज्यादा भी बन सकती होंगी। वह फिर पलटकर बोला, "वैसे टोपियां तो चार बना दो, सबके काम आ जायेंगी।"

"ठीक है चार बना दूंगा...।" चंपत की बात पर संपत कुछ-कुछ हंस रहा था। चंपतलाल चला गया। पर आधे रास्ते में सोचने लगा, टोपियां तो ज्यादा भी बन सकती होंगी, तभी तो इतनी सारी टोपियां बनाने को तैयार हुआ है। क्यों न आठ टोपियां बनवाने को कह दूं... और वह फिर संपत के पास आ पहुंचा।

संपतलाल ने चंपतलाल की बात सुनी तो बोला, "टोपियों की बनवाई दे जाओ और मंगलवार को टोपियां ले जाना।" अब चंपतलाल ने जल्दी से आठ टोपियों की बनवाई के पैसे दिये और खुशी से चल पड़ा।

घर-घर में जाकर उसने अपनी बुद्धिमानी की बातें बघारते हुए कहा, "अब मुसीबत में होगा बेचारा संपत। कैसे बनेंगे उसके कुनबे के कपड़े। अगर हम सभी यही रुख अपना लें तो देखो उसका पूरा परिवार कपड़ों का मोहताज हो जायेगा।"

फिर उसने अपने बच्चों के नाम गिने, जोर से हंसा और मंगलवार का इंतजार करने लगा।



सप्ताह बीत गया था। आज मंगलवार था। चंपतलाल ने सबको आश्वासन दिया कि अभी सबके लिये टोपियां ले आयेगा। वह तेजी से संपतलाल के पास जा पहुंचा। संपतलाल ने टोपियां पहले से ही तैयार रखी थीं। उसने चंपतलाल का बड़े तपाक से स्वागत किया और फिर उसे आठ टोपियां थमा दीं-"ऐ ! इतनी छोटी-छोटी टोपियां ? यह क्या तमाशा है ? यह क्या मज़ाक है ?" चंपतलाल बोला।

"मज़ाक तो आपने किया, जो इतने छोटे-से टुकड़े की आठ टोपियां बनाने का आर्डर दिया। देखिये साहब ! मैंने अपना काम पूरा कर दिया है, टोपियों को ले जाइये...सिर ज़रा छोटे करवा लीजिए।"

संपतलाल के चेहरे पर मुस्कराहट फैल रही थी और उधर चंपतलाल को उसकी मुस्कराहट कैंची की तरह काट रही थी।

गोपीचंद

गोपीचंद बहुत मूर्ख था। ज़रा-सी कोई बात होती तो वह उसके बारे में सोचने लगता और सोचता ही जाता। सोचते-सोचते वह ऐसे खो जाता कि झंझोड़े जाने पर ही सामान्य स्थिति में लौट पाता। एक बार कक्षा में उसने पढ़ा कि एक बिल्ली एक चूहे के पीछे दौड़ी। चूहा चालाक था। वह जान बचाकर जंगल में भागा। बस गोपीचंद पढ़ते-पढ़ते ऐसा ख्यालों में गुम हो गया कि अब वह भी बिल्ली के पीछे भागते-भागते जंगल जा पहुंचा। उसे लगा बिल्लियों और चूहों में दौड़ हो रही है, वह देख रहे हैं कि कौन फर्स्ट आता है...तभी उसे लगा सौ मीटर की दौड़ के लिए एक तरफ चूहे, दूसरी तरफ बिल्लियां तैयार बैठी हैं...अतः गोपीचंद ने सीटी बजा दी। चूहे और बिल्लियां दौड़ने लगे और फिर दौड़ते-दौड़ते बहुत दूर चले गये। गोपीचंद बैठे-बैठे कभी ताली पीटता तो कभी सीटी बजाता। कक्षा के सारे लड़के गोपीचंद के पास खड़े थे, लेकिन गोपीचन्द तो मग्न था। एक लड़के ने कहा, "गोपीचंद किसी सोच में डूब गया है।"

दूसरा बोला, "डूबते को तिनके का सहारा, चलो इसे तिनका दें।" तीसरा बोला"लेकिन तिनका तो चोर की दाढ़ी में ही मिलेगा। अच्छा ठहरो। स्कूल में पड़े झाड़ू का तिनका इसको दे देते हैं।" उन्होंने बड़ा-सा तिनका गोपीचन्द को दिया तो वह सकपका गया। वह वहां से उठा और सीधे घर जा पहुंचा।

वहां उसने देखा मां रोटी सेंक रही थी। उसने काले तवे पर सफेद फूली रोटी देखी तो उसे भूख लग गई। फिर सामने आंखें मलकर देखा, तवा सफेद है। फुल्के बेल-बेलकर उसकी मां थाली में डालती जा रही थी। वह बैठा लोहे के काले फुल्के और लोहे के चने चबा रहा है। कड़क! दांत में जैसे पत्थर-सा आ गया हो, वह चिल्लाने वाला ही था कि मां ने फूली-फूली रोटियां मेज पर ला पटकीं।

रोटी फूलकर ऊंची उठी हुई थी। उसने रोटी पर जोर से हाथ दे मारा। उसमें से भाप निकली और गोपीचन्द की अंगुली झुलस गई। उसने अंगुली मुंह में रखी तो मां ने आकर गोपीचन्द को झटका दिया। गोपीचन्द तुरन्त बोला, "देखो तो मां, रोटी सांस ले रही है। बेचारी का दम फूल रहा है, मानो दादाजी की तरह अस्थमा से पीड़ित हो।"

मां ने सिर पीटा। कटोरी में दाल और थाली में सब्जी डालकर चार सूखी रोटियां ला पटकीं। अब गोपीचन्द उस रोटी के टुकड़े काटकर दाल में तैराने लगा और फिर जैसे वह किसी नदी के किनारे बैठकर छोटी-छोटी मछलियां पकड़ने के लिए कांटा डाल रहा हो...

चम-मच चलाने लगा। फिर लपक-झपककर उनको खाता गया और थोड़ी ही देर में सारी सूखी रोटियां डकार गया।

इससे पहले कि वह ख्यालों में खो जाये उसकी मां ने उसे जोर से कहा, "अब सोचना बन्द कर दे और सो जा।" मां ने जोर से दरवाजा बन्द करके चिटकनी लगा दी तो गोपीचंद बोला, "मां सोचना कैसे बन्द करते हैं?" मां ने कहा, "दोनों होंठ बन्द करके ऊपर अंगुली रख दे। अंगुली चिटकनी होती है। यह लगी रहे तो होंठ से बात निकल ही नहीं सकती।"

"कैसे नहीं निकल सकती? भला देखो तो मैं होंठ बन्द करके भी बोल सकता हूं" गोपीचंद ने कहा। तब मां ने कहा, "अंगुली ठीक तरह से रख।"

"हूं! सारी रात कैसे रखूंगा?" फिर भी गोपीचन्द ने कसकर अंगुली होठों पर रख ली।

"सारी रात जरूरत ही नहीं। थोड़ी देर बाद तेरी मुंह की सुरंग में पड़ी जीभ सो जायेगी। फिर वह होठों से बाहर नहीं आयेगी और तू आराम से अंगुली हटा लेना। ठीक है। मां ने बताया और फिर बोली "जीभ सो जाये तो एक से सौ तक गिनती गिनना...अच्छा। गोपीचन्द ने अब चैन की सांस ली। होठ बन्द कर लिये। थोड़ी ही देर में उसे लगा जीभ सो गई है। उसने होठ को हल्के से थपथपाया कर देखा और फिर मुंह से अंगुली हटा ली। फिर वह एक दो तीन चार पांच...गिनते-गिनते थक कर सो गया।

अगले दिन जब गोपी उठा तो उसने मुंह में अपनी जीभ घुमाई जैसे उसे भी जगा रहा हो। तभी गोपी की मां ने जोर से कहा, "रात भर खर्राटे क्यों लेता है। सारी रात मेंढक की टर्र-टर्र होती रही।"

एं मेंढक! तो मेंढक जरूर मेरी नाक में घुस गया होगा। अब तो गोपी ने अपनी नाक को मरोड़ा, नथुनों को टटोला और जोर से रोने लगा।

"अब क्या है?" गोपी की मां ने झुंझला कर कहा। फिर सहसा उसे अपनी गलती का ध्यान हो आया। अतः वह बोली "अरे! वह मेंढक तेरी नाक में तो जा ही नहीं सकता। इतनी छोटी नाक में मेंढक जायेगा तो खर्राटे कहां से लेगा और वह तो एकदम मर ही जायेगा।"

जब गोपी ने सचमुच अपनी नाक देखी तो उसे इस बात पर रोना आया कि उसकी नाक छोटी क्यों है और फिर खुशी हुई कि मां और पिताजी की नाक में तो मेंढक घुसने का हमेशा खतरा ही बना रहता होगा। इन्हें सोते समय नाक के आगे जालीदार दरवाजों की तरह कुछ लगा लेना चाहिए जिसमें से सांस छन-छन कर आये-जाये। फिर उसने जालीदार दरवाजों को गौर से देखा।

अगले ही दिन उसने एक तेज औजार से उन दरवाजों की जाली में से गोल-गोल टुकड़े काट लिये और रात को जब मां सोने लगी तब वह लपक कर उसके पीछे आ गया। उसकी

नाक के आगे जाली के गोल टुकड़े रखते हुए बोला, "अब मेंढक नहीं आ सकेगा...।"

मां का जी चाहा वह अपना सिर पीट ले लेकिन चुप रह गई। उसने झटपट जाल टुकड़े उससे ले लिये। अब गोपीचन्द बहुत खुश था।

धीरे-धीरे गली-भर के जालीदार दरवाजों में से दो-दो, चार-चार टुकड़े गायब होने जब पड़ोसियों ने आपस में बातचीत शुरू की तो गोपी की मां का माथा ठनका। वह गं के कमरे में जा पहुंची। गुस्से से आग-बबूला होकर उसने गोपी को बहुत पीटा। गोपी ते हुए बोला, "मैं तो नाक के अन्दर फिट करने के लिये जालियों की छलनी बना रहा...। मैंने हर तरह के तार अपनी नाक में फिट करके देख लिये हैं—। अब देखना नाक, अन्दर एक नया फिल्टर फिट हो जायेगा—देखो मेरी नाक में है"..."क्या ?" गोपी की मां खि पड़ी। डाक्टर को बुलाया। डाक्टर ने उसकी नाक से फिल्टर के लिए लगाई गई जाली की छोटी सी कतरन उतारी, लेकिन गोपी सोच में डूब गया।

गोपीचंद की मां डाक्टर को देखकर हैरान थी। वह गोपीचंद को बार-बार शाबाश-शाबाश कह रहा था। फिर उसने गोपीचन्द से कहा, "ऐसे ही एक फिल्टर के परीक्षण में हम लोग भी लगे हुए हैं, लेकिन अब तक सफल नहीं हो सके। तुमने यह बारीक काम करके हमें नया रास्ता दिखाया है। मैं आज ही इस पर और प्रयोग करता हूं।"



"प्रयोग नहीं, यह तो इसकी मूर्खता है, मूर्खता" मां ने डाक्टर से माफी मांगते हुए कहा। गोपी बहुत खुश था। डाक्टर ने उसके बनाये जाली के टुकड़ों को अपनी जेबों में भर लिया और चला गया। अब स्कूल के बाद गोपी डाक्टर के पास जाकर उसकी लेबोरेट्री में बैठा रहता।

डाक्टर ने कड़ी मेहनत करके ऐसा फिल्टर इजाद किया जो अनेक संस्थानों के गौरव की बात थी। गोपी को एक बड़े-से समारोह में पुरस्कार मिला तो उसकी मां हैरान रह गई। अब न वह गोपी को मूर्ख कहती, न ही पीटती थी। वह जान गई थी कि हर महान आदमी पहले मूर्खचंद ही होता है, जिस डाल पर बैठता है उसी डाल को काटने लगता है। गोपीचंद जब बड़ा-सा सम्मान पत्र लेकर मां के पास आया तो मां ने उसे गले लगा लिया। गोपीचंद धीरे-से मां के कान में बोला, "अभी हमारी गली में छः मकान ऐसे हैं जिनके दरवाजों की जालियां मैंने नहीं काटीं। अब मैं कान के लिए एक फिल्टर बनाऊंगा ताकि कान गंदी बातें न सुनें...अच्छा मां।" गोपी की मां को कुछ समझ नहीं आ रहा था। वह सोचने लगी कि यह खुश होने की बात है या रोने की। गोपी फिर मां के गले लग गया।

अपना ही डर

अनिता के घर में जब उसके चाचा-चाची आये तो वे ढेरों सामान भी लाए। उन्होंने अनिता को भी ढेरों चीजें ला दी थीं। लेकिन अनिता को हर समय लगता उससे ज्यादा सामान उन्होंने अपने बेटे रतन के लिए रख लिया है। इसलिए वह रतन की हर चीज टटोल कर देखती रहती और फिर चाचा-चाची के सामने मुंह फुलाए बैठ जाती।

अनिता की मां ने उसकी यह हरकत देखी तो खीझ उठी। उसने अनिता को डांटा पर उस पर कोई प्रभाव न पड़ा।

आखिर उन्होंने रतन से कहा, "अनिता को सभी चीजें मत दिखाओ। अपना पेन, पेंसिलें रबड़ सब अपने बक्से में बंद रखो। वह लेना चाहेगी तो भी नहीं देना।" रतन बोल उठा, "नहीं-नहीं, अनिता को भी तो बिल्कुल वैसी ही चीजें दी हैं। वह भला मेरी चीजें क्यों लेगी। अनिता तभी आ गई और बोली, "हां-हां मैं क्यों लूं भला, मैं कोई चोर हूं?"



"हां।" मां ने जोर से कहा।

"क्या कहती हो मां," अनिता सुनकर अवाक्-सी रह गई। रतन भी हैरान-सा मां को एकटक देखता रह गया। तब मां ने दोनों बच्चों को प्यार से पास बिठाया और बोली, "अनिता बेटी, तुम चोर नहीं हो लेकिन तुम्हारे मन में एक चोर घुसा है।"

"नहीं तो", अनिता ने अपने आपको टटोलते हुए कहा- "हां, मां तुम्हें पता ही नहीं है। यह चोर न दरवाजा खटकाता है, न ही पैरों की आवाज करता है। दबे-पांव चुपके-चुपके सेंध लगाकर हमारे मन में घुस जाता है।"

"अच्छा !"—रतन और अनिता दोनों इस नए चोर की बात को हैरानी से सुनने लगे। मां आगे कहने लगी, "यह चोर मन में आकर बैठ जाता है। फिर यहां-वहां अच्छी-अच्छी चीजें देख-देखकर हमारा मन ललचाता है। तब जी चाहता है सबकी चीजें छीनकर पास रख लें।"

"हां-हां, ऐसा तो मेरा मन भी करता है", अनिता झट से बोल उठी। रतन ने भी हां भरते हुए कहा, "ऐसा तो सबका ही मन चाहता है कि अच्छी-अच्छी सभी चीजें सिर्फ हमारे ही पास हों।"

"पहले मन चाहता है, फिर ललचाता है...और चोर हम पर सवार होने लगता है। फिर बड़ी तेज़ी से काम करता है। बड़ी सफाई से हमें पता भी नहीं चलने देता। हम उस चोर की बात मानकर चीजों पर हाथ साफ करने लगते हैं।"

"अगर हम इस चोर की बात मानते ही चले जायें तो एक दिन चोर भी बन जाते हैं..." मां ने कहा। अब अनिता और रतन दोनों सोच में पड़ गये। इधर अनिता की मां रसोईघर में काम करने लगी। रतन ने तब अपनी नई घड़ी अनिता को दिखाते हुए कहा, "देखती हो। इसमें अलार्म भी बजता है और जब अलार्म बजता है तो इसमें यह मुर्गी कुट-कुट नाच करने लगती है।"

"वाह-वाह !" कहकर अनिता ने उसके हागे हाथ बढ़ाया और घड़ी को देर तक देखती रही। उसका जी चाहा कि वह घड़ी लेकर वहां से भाग खड़ी हो या फिर रात को जब रतन सो रहा हो तो चुपके से उसकी घड़ी छुपा ले। तभी उसे मन के चोर की बात याद हो आई। "हां, हां, मां ठीक कहती हैं।" "क्या ?" अनिता को यों अचानक बोलते देखकर रतन ने पूछा। अनिता बोली, "मां ठीक कहती है, हमारे मन में चोर घुस आता है।

"देखो न, तुम्हारी घड़ी चुरा लूं, छीन कर भाग जाऊं...मेरा मन ललचाने लगा। हाय राम अगर मैं इस चोर की बात मान लेती तो।"

रतन ने झटपट घड़ी छुपाते हुए कहा, "हाय राम ! तब तो तुम्हारे मन का चोर मेरी सारी चीजें उठाने को कह रहा होगा।"

अनिता बड़े भोलेपन से बोली, "हां-हां तुम सारी चीजें छुपा लो। मैं भी अपनी चीजें तुमसे छुपा लेती हूं, क्यों ?"

"हां, तुम भी छुपा लो। जो मेरी मम्मी ने तुम्हें सुनहरे दो पेन दिये हैं। मेरा मन बार-बार उन्हें लेना चाहता था।"

"अच्छा अब तो हमें इस चोर पर कड़ी निगाह रखनी पड़ेगी। रतन, मुझे तो अपने से ही डर लग रहा है।"

"मुझे भी।"

"तो क्या करें ?" दोनों सोच में पड़ गये। दोनों ने अपनी-अपनी चीज़े छुपा भी ली थीं।

रात का समय था। अनिता ने देख लिया था कि रतन अपनी चीज़े कहां-कहां छुपा रहा है। वह चुपचाप उन चीजों को उठाने लगी थी कि उसे लगा उसके भीतर ही-भीतर कोई जोरों से हंस रहा है। वह उलटे पांव लौट पड़ी और अपने आपको कसकर दो तमाचे लगा दिए।

अनिता की मां हड़बड़ा कर उठ बैठी। अनिता बोली, "देखो न मां, वह जो मेरे अन्दर चोर था वह मुझे फिर चोरी करने को कह रहा था। दो चपत लगाये तो भाग खड़ा हुआ।"

"बहुत ठीक किया तुमने। अब वह चोर तुम्हारे मन से भाग खड़ा होगा...।"

"अच्छा"—अनिता खुश हो उठी।

"हां, लेकिन जब भी तुम्हें औरों की चीज़ हथियाने का लालच हो, तो सोच लेना कि वही चोर फिर तुम्हारे मन में आ बैठा है। चलो अब सो जाओ।" अनिता भी लेट गई और करवट बदलते हुए बोली, "अब मैं इस चोर को अपने पास भी न फटकने दूंगी और रतन को भी समझा दूंगी कि चोर को कैसे भगाया जाता है।"

तभी चारपाई के नीचे से थप्पड़ की आवाज़ से मां बेटी चौंक उठे। रतन चारपाई के नीचे छुपा हुआ था और वह अनिता के पेन चुराने आया था। अनिता की बात से उसकी भी आंखें खुल गई थीं। वह भी बोल उठा, "मैंने भी चोर को मार भगाया है—और अब इसे मैं अपने पास नहीं फटकने दूंगा।"

अनिता और रतन की आदतें इतनी जल्दी सुधर जायेंगी—मां ने सोचा भी न था। दोनों बच्चे अब जैसे अपने ऊपर ही आठों पहर पहरा देने लगे थे ताकि उनके मन में चोर घुस ही न सके।

गिनतीलाल की छींक

श्रीमान गिनतीलाल को सुबह उठते ही ढेर-सी छींकें आ जातीं। आती भी इतनी तेजी से कि बेचारे संभल न पाते। आक्छी...आक्छी करके लौटते जाते।

उनकी छीकों से सारे घर में हलचल होने लगती थी। पांच बेटे, पत्नी, तीन बेटियां... सबकी नींद हराम हो जाती। जब सारे उठ जाते, चहलकदमी करते, भन्नाते तो गिनतीलाल जैसे बेदम होकर थके-हारे, मन को मारे फिर लेट जाते। इतने थक जाते कि छींकों की जिम्मेदारी अपने परिवार को सौंपकर, खुद लम्बी तान कर सो जाते। खर्र-खर्र खर्राटों की आवाज सारे घर में सुनाई देती थी। गिनतीलाल की इस आदत से सब दुखी थे। जैसे उन्होंने बारी लगा रखी हो। वे सो जायें तो सारा घर जागे। सारा घर सोने लगता तो उन्हें छीकों का दौरा शुरू हो जाता।

एक दिन उन्होंने सोचा नींद की गोली खाई जाए ताकि जी भर कर सो सकें। यही सोचकर उन्होंने घर में एलान कर दिया कि नींद की गोलियां खरीद लाये हैं। अब सब आराम से सो सकते हैं।

सोने का समय आने पर गिनतीलाल ने सभी से कहा, "जुबान को लगाम दो...मैं गोली खा रहा हूं, मुझे सोने दो।"

लेकिन यह क्या ? सुबह चार बजते ही उन्हें पहली छींक आ गई। फिर छींकों का तांता लग गया। सारा घर अपने आप ही जाग गया। बहुत देर छींकें आने के बाद भी जब वे न रुकीं तो उनके बेटे एक डाक्टर मंहगाराम को बुला लाए ताकि ऐसी नाक जो बेबाक छीकें मारती जा रही है, की मरम्मत की जाये।

नाक का डाक्टर गले का डाक्टर भी था। सिर पर यंत्र लगाये, उसने यंत्रवत पूछा- "कहिए क्या है ?"

गिनतीलाल ने एक बढ़िया छींक पेश करते हुए कहा, "मुझे छींक रोग हो गया है।"

डाक्टर ने तुरन्त कहा, "पहले आपके दिमाग का इलाज होगा, फिर छींक का। खैर दिमाग तो...शायद ही मिले...ठहरिये, पहले आपकी नाक तो देख लें।"

गिनतीलाल फिर बोले, "अजी! अब तो रोज़ सुबह छींक आना आदत का हिस्सा बन गया है। सुबह उठते ही पहले छींक फिर अन्य कार्य।"

अब डाक्टर ने गिनतीलाल को सिर से पांव तक घूरकर देखा तो गिनतीलाल के गुस्से का ठिकाना न रहा। वह चिल्लाए, छींकों के नाम पर यों सिर से पांव तक देखने की क्या

ज़रूरत है। छींक का विभाग और नाक का विभाग अलग-अलग है। नाक और नथुने छींक मारने में जो योगदान देते हैं वे हाथ-पांव नहीं देते।"

डाक्टर मंहगाराम बोल उठे, "मैं सोच रहा था कि आपके सिर-पैर तो हैं न; क्योंकि ऐसे आप ही हैं जो बे-सिर-पैर की हांक रहे हैं...। अच्छा अब जरा चुप हो जाइये और मुंह खोलिये..." । आप खुद तो मुंह खुलवा रहे हैं और चुप रहने की ताकीद भी किये जा रहे हैं ...खैर लीजिए मैं चुप हो गया...अब आप मनमानी कीजिए...।"

डाक्टर मंहगाराम ने नाक को चिमटेनुमा औजार से ऐसे पकड़ा जैसे उनकी पत्नी गरम-गरम तवा उतारते समय पकड़ती थी। गिनतीराम को लगा जैसे मंहगाराम उनकी नाक को कच्चे धागों से सिली सीवन की तरह उधेड़ देंगे और फिर नथुनों को उबलते पानी में डालकर स्टरलाइज़ करेंगे। फिर उस पर कोई नया परीक्षण शुरू होगा।

गिनतीलाल ऐसी दिमागी परेशानी में अचानक जोर से रो पड़े तो बच्चों ने चुप कराया और समझाया," पिताजी रोते नहीं। अभी डाक्टरजी मीठी-मीठी गोली देंगे। आपके नाक से छींकों की भरी थैली निकाल लेंगे।"



गिनतीलाल को लगा कि कोई सपेरा बीन बजा रहा है और उनके भीतर विषदन्त निकालने को हाथ बढ़ा रहा है। उन्होंने डाक्टर का हाथ झटक दिया लेकिन पांचों बच्चों ने

उनका हाथ पकड़ लिया। पत्नी ने भी मुंह पकड़कर सीधा किया तो गिनतीलाल को याद आया वह दिन, जब उन्होंने पत्नी का हाथ पकड़ा था। तब से लेकर आज तक वह उनसे मुंह सीधा करके बात भी नहीं करती और हमेशा उन्हें ही सीधा करती है। नाक की बात न होती तो आज वह भी बता देते। एक जोरदार छींक मारकर सम्मुख खड़ी इस सारी सेना को भगा देते। मन-ही-मन ठान लिया-नाक औरों से हमेशा बचानी चाहिये इस पर कभी आंच नहीं आनी चाहिये। खैर,उन्होंने अपने-आप को इन डाकुओं के हवाले कर दिया और चुप्पी लगा ली।

अब मंहगाराम को बन आई। उसने नाक चढ़ाई और फिर नाक के अन्दर टार्च से रोशनी फेंकी। हर तरह से नाक को देखा-भाला और टटोला। आखिरकार दवा लगाने और पर्चा लिखने के बाद डाक्टर बोला, "घंटे भर से मैं यहां खड़ा हूं, आपको एक भी छींक नहीं आयी। इसका मतलब है, आपको बीमारी नहीं सिर्फ वहम है।"

गिनतीलाल तपाक से बोले, "अजी! छींक आने का यह भी कोई टाइम है। छींकें आती हैं सुबह-सवेरे, जब चिड़ियां चूं भी नहीं बोलती, सन्नाटा होता है। तब इस छींक का आनन्द लिया जाता है। सारे घर के लिए मेरी छींक नहीं मुर्गे की बांग है—कुकड़ूकूं। उठो सुबह हो गई, छींक अलार्म है जो कि हर समय नहीं बजता। वैसे आप पहले बता देते कि मेरी छींक सुने बिना आप नहीं जायेंगे तो मैं पहले ही सुना देता। आपकी खातिर अपना रिकार्ड तोड़ देता। वैसे मेरी छींकें मामूली छींकें नहीं हैं। अगर इन्हें डाक्टर की जगह कोई फिल्मी गाने लिखने वाला देख लेता तो इन्हीं की धुन पर गीत लिख देता। आक्छी...आक्छ...यह बीमारी। न मार छींक...छिक-छिक-छू-छिक...। कल चलने की तैयारी। गाड़ी आई स्टेशन... रुक री। छुक-छुक छींक मार गाड़ी। मत चीख...नहीं यह बीमारी।"

डाक्टर का सिर चकरा गया। उन्होंने देखा गिनतीलाल अपनी धुन में आकर नाच और गा रहे हैं। तुक पर तुक बनाते चले जा रहे हैं। उनकी तुक बनाने की बढ़ती गति देखकर मंहगाराम ने वहां गतिनिरोधक लगा दिया और बोले, "यह दवा की दो बूंदें डाल लीजिए और यह गोली खाइए। मजाल है, आपको छींक आए।"

गिनतीलाल बोल उठे, "कितनी देर की गारंटी देंगे।" तो मंहगाराम भन्ना उठे और बोले, "आपके नाक की कोई गारंटी कैसे दे-दे,फिर भी रुई से या ड्रापर से नाक में दवा डालिये। जब बूंद-बूंद दवा भीतर जायेगी तो आपकी नाक खुल जायेगी।"

"वाह साहब! नाक खुल जाने का मुहावरा तो मैं पहली बार सुन रहा हूं। मेरी आंख-नाक-कान सब खुले हैं।"

मंहगाराम ने कहा, "नहीं मेरा मतलब है यह कुछ अधिक खुल जायेगी।"

तो गिनतीलाल जोर से बोले, "हां-हां खिड़की की तरह खुला रखूंगा ताकि हवा आ जा सके। अजी आप जानते हैं आजकल खिड़की खुली रखिये तो चोर-उचक्के अन्दर घुस आते हैं और सारा माल लूटकर ले जाते हैं।"

मंहगाराम ने उसकी बात की अनसुनी करते हुए कहा, "आप दवा डालिए बस...सब ठीक हो जायेगा।"

अब मंहगाराम ने अपना ताम-झाम समेटा। जाने लगे थे कि तभी गिनतीलाल बोले, "अब अगर छींक आई तो अच्छा न होगा। आपकी प्रेक्टिस जाती रहेगी। एक-एक घर में जा-जाकर आपकी असफलता का ऐलान करूंगा।"

वह बोलते जा रहे थे लेकिन डाक्टर मंहगाराम तब तक जा चुके थे।

मास्टर धोखेलाल

मास्टर धोखेलाल अपने होनहार छात्र-छात्राओं को कोई भी विषय देकर उन्हें पूरी छूट दे देते—जो मरजी लिखो...। उससे छात्रों के मन में मौलिक प्रतिभा जागती है। उन पर अपने विचार लादने या थोपने की चेष्टा नहीं करनी चाहिये। आठवीं कक्षा के छात्र-छात्राएं उनकी सूझ-बूझ और नये-से-नये विचारों की दाद देते थे। इस बार मास्टरजी ने छात्रों को गाय पर निबंध लिखने को दिया था। सबकी आंखें सहसा मास्टरजी पर जा टिकीं। सबको अपनी ओर यूं ताकते देखकर वह बोले, "ऊंट हो गये हो, अभी तक गाय पर निबंध नहीं लिख सकते। 'गाय हमारी माता है' जैसे वाक्य से निबंध शुरू नहीं करना...अब देखें क्या सूझता है तुम्हें ! देखो अता-पता में बता देता हूं। गाय वह, जो सीधी गऊ-सी हो। ज़रूरत पड़ने पर



सींग दुलत्ती मारे, पर फिर भी अपने खूंटे से बंधी रहे…समझे ! तुम बोलो किंशुक, क्या लिखोगे ?"

"पहला वाक्य बोलो" कहकर उन्होंने किंशुक को कान से पकड़कर खड़ा कर दिया। किंशुक बोला, "जी गाय ! गायजी इसकी दो आंखें होती हैं।"

"क्या ? अबे ! अगर गाय की आंखें होतीं तो क्या वह खूटे से ही बँधी रह जाती जहां बांध दिया वहीं युगों तक खड़ी रहती ! आंखों के आगे सारे अत्याचार होने देती। उसका बछड़ा जब मां-मां चिल्लाता है, तो क्या वह चिढ़कर दुलत्ती मार कर दुहने वाले को पटककर न गिरा देती। क्या गाय की आंखें हैं ? गाय कौन है ? गाय की परिभाषा क्या है। वह जब रम्भाती है तो "रम्भा हो" की आवाजें गूंज उठती है ?"

"अब बोलो, आख के बाद बोलो !" "तुम बोलो नूतन", कहकर उन्होंने अब नूतन नाम की छात्रा को खड़ा कर दिया। वह यों ही शैतान थी। वह बोली, "हर लड़की एक गाय होती है जी।

पर उसके मुंह में से उन्होंने अधूरी बात छीन ली। मुंह चिढ़ाते हुए कहा, "हां, गाय होती ही है, ये सारी गायें ही तो बैठी हुई हैं। और मैं उन्हीं के आगे भौंक रहा हूं। तुम्हें पढ़ाना तो भैंस के आगे बीन बजाना है। यों हर वक्त मुंह में चिगम रखकर जुगाली करने से ही तुम गाय बन जाओगी। गाय कैसी सीधी, कितनी सरल होती है।" 'सरल' शब्द नूतन ने पकड़ लिया। जैसे गाय का रस्सा हाथ में आ गया हो।

"हां-हां सरल ! वह विरोध नहीं करती। बात-बात में मुंह नहीं बनाती। तकरार नहीं करती ! उसके दिमाग में भूसा नहीं भरा होता। उसका अक्ल घास चरने नहीं जाती।"

नूतन धम्म से बैठ गई तो मास्टरजी ने हरीश को खड़ा किया। और बोले, "अब बोलो तुम गाय पर क्या निबंध लिखोगे।"

"जी-जी" करता हुआ हरीश यहां-वहां हंसते छात्र-छात्राओं के साथ सम्मिलित होते हुए बोला, "जी गाय की पूंछ होती है। मास्टरजी की नाक पर मक्खी नहीं बैठने देती।"

"ऐं !" घोखेलाल हैरान होकर बोला, "गाय पूंछ से मास्टरजी के नाक की मक्खी उड़ाती है।"

"नहीं, मास्टरजी गाय की भी आपकी और हमारी तरह नाक होती है न, उसी पर बैठी मक्खियां उड़ा लेती है।"

"अच्छा तो, यह कौन से 'मेक', कौन से माडल की गाय हुई भला। किस नस्ल की है ? ब्रीड क्या है ? कम्बख्तो ! मुझे भी बताओ। किस गाय की पूंछ उसके मुंह पर चंवर डुलाती है। एक गाय सीधी खड़ी करके उसको नाक पर मक्खी बिठाकर दिखाओ। गाय पूंछ डुलाकर मुंह से मक्खियां उड़ा रही है।"

"जी गाय बैठकर, उदास मन मारे, टांगों में यानि घुटनों में मुंह छुपाए हो तो वह पूंछ से मक्खियां उड़ा सकती है।" हरीश ने हंसी दबाते हुए कहा।

मास्टर धोखेलाल को गुस्सा आया, "हां, गाय ही तो उदास होगी। तुम्हारे जैसे अनोखे लालों से अपने हुलिये की बात सुनकर उदास होगी। घुटनों में मुंह छिपाएगी कहो तो कोई गाना भी गाएगी। उसका मन उचाट है उसे घास-पत्ते अच्छे नहीं लगते। वह अनमनी-सी यहां-वहां डोलती है। मन-ही-मन कुछ बोलती है, क्यों जो! तुम्हारे जमाने में तो यही होगा ?"

'तुम लोग मुंह उठाये खिखियाते रहोगे और गाय तुम्हारी हरकतें देखती रहेगी। वह उदास नहीं होती। वह तुम्हारी मूर्खता पर हंसती है और तुम्हारी तरह मुंह उठाकर नहीं, मन-ही-मन हंसती है। वह हमारी तरह नहीं है। हमारी नाक पर मक्खी बैठ सकती है; लेकिन गाय वह है जो नाक पर मक्खी न बैठने दे। उसके पास पूंछ की सुविधा है, हमारे पास नहीं। वरना क्या मजाल किसी के नाक-मुंह पर मक्खी बैठ सकती।" सारी कक्षा को अपनी प्रतिभा से ध्वस्त करके मास्टर जी बोले, "हां तो यह भी याद रखो, उसकी चाहे चार टांगे हैं, दो सींग है, पूंछ एक है, वह सब कुछ हैं जो एक पशु में होता है। लेकिन याद रखो वह हमारी तरह पशु नहीं है, वह तो निरी गाय है।"

नादान ईमानदार

धन्नालाल की दुकान पर आटा, चावल और चीनी के लिये लोगों की लम्बी कतारें बंधी लगी रहतीं। धन्नालाल भी तोल के वक्त डंडी मार लेता। सारा समय लोग 'धन्ना आटा', 'धन्ना चावल', 'धन्ना चीनी' की हांक लगाते रहते। दिन-रात लोगों से मगजपच्ची करने के कारण धन्नालाल तंग आ गया तो उसने अपने बेटे सूरज को दुकान पर बुलवा भेजा। सूरज ने दुकान पर आते ही देखा ढेरों बोरियां चीनी, चावल और आटे की भरी हैं। उसकी खुशी का ठिकाना न रहा।

एक बार की बात है—बाहर राशन लेने वालों की लम्बी कतार लगी थी। और धन्ना लाल ने दुकान के बाहर बोर्ड लटका दिया—आटा, चीनी, चावल खत्म हो गया है। इस समय सूरज घर से आया नहीं था। जब सूरज ने दुकान में पड़ी बोरियां देखीं तो वह जोर से चिल्लाया, "चावल है, चीनी है, आटा है, सभी बोरियां भरी पड़ी है—भरी हुई हैं रुको-रुको, सब लेकर जाओ।"

यह देखकर धन्नालाल ने सिर पीट लिया। हारकर उसे बोर्ड हटाना पड़ा। लाइन में लोग चिल्ला रहे थे, "मक्कार कहीं का बेईमान, मुनाफाखोर, चोर बाजार।"

सूरज को कुछ समझ न आया। देखते ही देखते बोरियां खाली हो गईं और दुकान पर फिर वही बोर्ड लटका दिया गया।

अगले ही दिन फिर तेल बेचने की बात थी। धन्नालाल ने सूरज से छिपा कर तेल के टीन पहले ही गोदाम में भिजवा दिये थे। सूरज ने अपनी दुकान के आसपास बहुत-सी आवाज सुनी तो वह चौंक गया। फिर उसने चुपके से देखा कि सारे टीन कहां जा रहे हैं और वह गोदाम में जा पहुंचा। ढेर-सारी बोरियां और इतना सामान देखकर उसने दांत तले अंगुली दबा ली।

फिर दुकान पर वापिस आया और देखा, बाहर वही बोर्ड लटका हुआ था। राशन खत्म, तेल खत्म। वह भागा-भागा पिताजी के पास जा पहुंचा। पर धन्नालाल और माल लाने के लिए बाजार गये थे। इसीलिए वह मन मारकर बैठ गया।

रात का समय था, पिता का इन्तजार करते-करते सूरज थक कर सो गया। आधी-रात को उसे खटपट सुनाई दी। सूरज चौंक गया। उसने देखा कुछ लोग दबे पांव गोदाम की तरफ बढ़ते चले जा रहे हैं। और कुछ फिर आवाजें हो रही हैं। उन्होंने गोदाम की दूसरी तरफ खिड़की से बाहर बोरियां फेंकनी शुरू कर दी। 'यह तो चोर हैं चोर...ठहरो इन्हें मजा

चखाता हूं। पहले पुलिस को फोन करके बुला लूं—फिर। और यह सोचकर उसने उस अंधेरे में पुलिस को फोन कर दिया। फोन की आवाज सुनते ही खलबली मच गई और इधर सूरज ने शोर भी मचाना शुरू कर दिया।

शोर सुनते ही धन्नालाल हड़बड़ा कर उठ बैठा, "चोर, चोर, गोदाम में चोर...धन्नालाल ने आते ही सूरज के मुंह पर हाथ रख दिया और बोले, "चुप्प।"

"वाह! चुप कैसे हो जाऊं। मैं शोर न मचाता तो सारा गोदाम खाली हो जाता। अभी तो चोर सिर्फ चार छः बोरियां ही लेकर गये हैं। वे तो सारा गोदाम खाली कर जाते।"

"ओफ्फोह! मैं कहता हूं, यह बात शोर मचाने की नहीं है।" सूरज जोर से चिल्लाया। आप शोर की बात कह रहे हैं मैंने तो—मैंने तो।"



बात अधूरी रह गई। पुलिस आ पहुंची थी और धन्नालाल को हथकड़ियां पहना कर ले गई। सूरज हैरान था। चोर तो भाग गये थे फिर पुलिस का अब क्या यही काम रह गया था कि वह जो मिले उसे पकड़ ले जाये? वह पुलिस वालों पर चिल्लाया तो इन्स्पेक्टर गरज कर बोला, "उन चोरों को तो हम ढूंढ ही लेंगे। हमें तो इस चोर-बाजारी करने वाले की तलाश थी। ऐसे काला धंधा करने वाले देश के दुश्मन हैं।" सूरज कुछ न समझ सका। वह

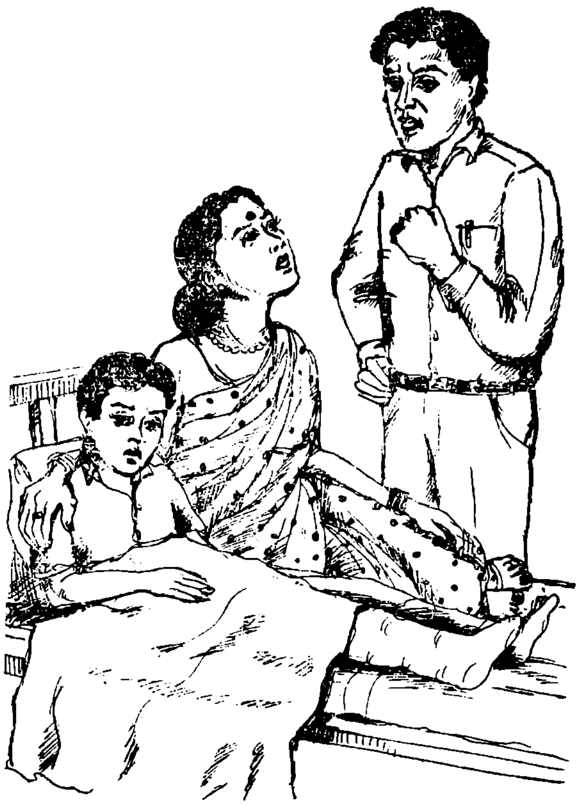
रोता रहा। अगले ही दिन फिर उसके घर की तलाशी हुई। सूरज ने देखा उसकी मां भी रो रही है। वह समझ गया कि मामला गंभीर है।

तब उसने मां से सारी बात पूछ ही ली। सूरज की मां बोली, "मैं तो तेरे पिताजी को पहले ही मना करती थी पर वे सारा माल गोदाम में भरकर दुगुना रुपया वसूल करने की तरकीब सोच रहे थे कि पकड़ में आ गए। ईश्वर जो करता है अच्छा ही करता है।" मां ने सूरज से कहा, "तेरी नादानी ने तेरे पिताजी को ईमानदारी की राह दिखा दी।"

—

भूल सुधार

विकास बहुत अमीर मां-बाप का बेटा था। उसके पिता दलपतराय एक व्यापारी थे और वह हमेशा लोगों से घिरे रहते थे। विकास अनेकों बार पिताजी से उनके व्यापार की बातें जानना चाहता पर पिता को फुरसत ही कहां थी। एक बार की बात है। वह अपने मित्रों के साथ पिकनिक पर जा रहा था। रास्ते में उसकी बस उलट गई। सभी को चोट आई। विकास बुरी तरह से घायल हो गया था। सब बच्चों को अस्पताल ले जाया गया। वहां से मरहम-पट्टी करके इन्हें घर भेज दिया गया। लेकिन विकास को छोडने के लिए स्कूल के प्रधानाचार्य स्वयं उसके घर तक आये। उन्होंने दलपतरायजी से इस दुर्घटना के लिए हाथ जोड़कर माफी मांगी। दलपतराय जी की आंखों में खून उतर आया था। उन्होंने स्कूल को बहुत लम्बा पत्र लिखा। अखबारों में स्कूल के बारे में ढेरों आरोप लगाकर खबरें छपवाईं। वहां के प्रधानाचार्य का जीना हराम कर दिया। विकास यह सब बिस्तर पर पड़े हुए देख



रहा था। उसका एक पांव इस दुर्घटना में कट गया था। अब वह ठीक तरह से चल भी न पाता था।

दलपतराय ने अपने बेटे के लिए ट्यूटर का प्रबंध कर दिया लेकिन विकास बार-बार स्कूल जाने का हठ करता। आखिर विकास की मां ने दलपतराय को समझा-बुझाकर स्कूल भिजवाने की व्यवस्था कर दी।

विकास के पिता के बारे में सभी अध्यापकों में चर्चा थी। प्रधानाचार्य इसी ताक में थे कि इस रईस व्यक्ति से कैसे टक्कर लें। विकास बैसाखी के सहारे स्कूल आया और आकर क्लास में बैठ गया। बारी-बारी सभी अध्यापक पढ़ाने आये पर किसी ने उसका हाल न पूछा। दो महीने से वह स्कूल न आ सका था। उसने लड़कों से पाठ्यक्रम आदि के बारे में सारी पूछताछ की और खूब पढ़ने लगा।

हिन्दी के अध्यापक श्री रलारामजी, प्रधानाचार्यजी के सगे भाई थे। वह जब भी विकास को क्लास में देखते तो उसको बात-बेबात पर डांट देते। एक बार की बात है विकास से प्रश्न पूछा गया तो वह जल्दी से खड़ा हुआ और मेज के बल पर झुककर उत्तर बोलने लगा। मास्टरजी कड़क कर बोले, "सीधे खड़े होकर उत्तर दो।"

विकास ने सीधा खड़ा होने की कोशिश की लेकिन गिर पड़ा। मास्टरजी गुस्से से पांव पटकते हुए बाहर चले गये। सभी लड़के उस पर खिलखिला रहे थे। विकास जैसे-तैसे खुद को संभाल पाया था कि तभी मास्टरजी वापस क्लास में आ गये और बोले, "चलो, विकलांग पर वाक्य बनाओ। फिर विकलांग पर निबंध लिखेंगे।"

तभी एक लड़का खड़ा हुआ और बोला—"विकास विकलांग है, उसकी टांग टूटी है। वह बैसाखी से चलता है। विकास को सभी विकलांग कहते हैं क्योंकि उसका पैर टूट गया है—अब उसका पांव कभी वापस नहीं आयेगा। विकास के पिता उसे पांव खरीद कर नहीं दे सकते।"

विकास यों सबको अपनी खिल्ली उड़ाते हुए देख रहा था। उसकी आंखों से झरझर आंसू बहने लगे। सारी कक्षा वाक्य रचना के बहाने विकास पर कटाक्ष कर रही थी। मास्टरजी विकलांग पर निबंध लिखने को कहेंगे और सारी कक्षा उसी पर निबंध लिखेगी। सबकी हंसी की आवाजें विकास को तीर की तरह चुभती चली जा रही थी। तभी उनकी कक्षा के आगे से प्रधानाचार्यजी गुजरे। कक्षा में अध्यापक के होते हुए भी इतना शोर ? वह हैरान हो गये। उन्होंने जल्दी से कक्षा में प्रवेश किया और रलाराम को देखकर हैरान रह गये और बोले, "माजरा क्या है?"

रलाराम हंसकर बोले, "देखिये न कितने अच्छे वाक्य बना रहे हैं बच्चे ! चलो प्रमोद बताओ, विकलांग का वाक्य ?"

प्रमोद खड़ा हुआ और हंसकर बोला, "विकास विकलांग है—विकास की टांग टूट गई।"

"चुप रहो।" प्रधानाचार्यजी गरज उठे। सारी कक्षा सहम गई। प्रधानाचार्यजी रलाराम से बोले, "तुम्हें शर्म नहीं आती।"

"शर्म किस बात की। इसके बाप ने जब हम लोगों की इज्जत उतारकर रख दी तो उसे शर्म नहीं आई।" रलाराम तपाक से बोले।

प्रधानाचार्यजी बोल उठे, "बाप का बदला बेटे से इस तरह लिया जा रहा है। देखो रलाराम हम बड़े है और हमें अपना बड़प्पन नहीं छोड़ना चाहिए। आज हम लोगों को एक-दूसरे पर कीचड़ उछालने का सबक सिखा रहे हैं। कल को यह सबसे पहले हम पर ही कीचड़ उछालेंगे। दलपतराय से हमारी कोई दुश्मनी नहीं है। जिस अमीर बाप के बेटे की टांग कट गई है उसने अगर हमें सिर्फ भला-बुरा कहकर ही छोड़ दिया तो क्या कम है। आओ विकास मेरे साथ आओ बेटा।"

विकास ने प्रधानाचार्यजी की आंखों में एक नयी प्यार की झलक देखी। रलाराम भी मुंह लटकाये खड़े थे। सारी कक्षा में भी जैसे विकास के लिए सहानुभूति उमड़ आई थी।



विकास घर पहुंचा तो उसका मन बहुत दुखी था। वह इसी दुविधा में था कि स्कूल की घटना पिताजी को बताये या नहीं कि तभी मां ने उसे आवाज़ लगाई। विकास लंगड़ाते हुए मां के पास गया और उसने फूट-फूटकर रोते हुए सारा किस्सा मां को बता दिया। तभी पीछे से दलपतराय भी आ पहुंचे। उन्होंने विकास की सारी बातें सुन ली थीं और उनकी भी आंखें भर आई थीं। विकास ने पिताजी को देखा तो उसका रंग भय से पीला पड़ गया। वह जानता था अब पिताजी श्री रलाराम की खबर लेने के लिए निकल पड़ेंगे। लेकिन दलपतराय विकास के पास आये, प्यार से उसे सहलाते हुए बोले, "मैं तुम्हारे दुख के कारण गुस्से में अंधा हो गया था। बेटा, उस गुस्से की तुम्हें इतनी कीमत चुकानी पड़ेगी यह मैंने सोचा भी न था। मैं जाकर तुम्हारे प्रधानाचार्यजी से माफी मांग लूंगा।"

आज की घटना के कारण प्रधानाचार्यजी अपने भाई रलाराम के साथ वहीं आ पहुचे थे। दलपतराय ने उन्हें तुरंत भीतर बुलाया और हाथ जोड़ दिये। प्रधानाचार्यजी यह देखकर हैरान रह गये। दलपतराय बोले, "प्रधानाचार्यजी, आप सबसे पहले मां-बाप को गुरु का आदर करने का सबक पढ़ाइये। सचमुच मैं गुस्से से पागल हो उठा था—विकास की ऐसी हालत देखकर...।"

प्रधानाचार्यजी की आंखों में आंसू थे। सभी ने अपनी भूल सुधार ली। इधर रलाराम जी ने बढ़कर विकास ने सिर पर हाथ रख दिया। विकास की आंखों में खुशी के आँसू छलक उठे।

खटपटराय

किसी नगर में खटपटराय रहते थे। जब तक वह किसी से झगड़ा न कर लेते उन्हें खाना हजम न होता। इसीलिये वह बात-बात में हर किसी से खटपट करते। उनकी इसी आदत के कारण लोगों ने उन्हें खटपटराय कहना शुरू कर दिया। पर इस बात पर उन्हें गुस्सा न आया। वह तो चाहते थे कि लोग उन्हें किसी न किसी तरह जान लें और उनसे आकर झगड़ा मोल लें। लोगों की आदत होती है जहां कोई अजीब चीज देखते हैं वहीं भीड़ जमा कर देते हैं। अब खटपटराय की दुकान पर वे जमा रहते। खटपट खट्टा-मीठा, तीखा-कुरमुरा—माल बेचते थे--यानि उनकी पंसारी की दुकान थी। उसी में उन्होंने डबलरोटी, मक्खन, अंडे भी रख दिये थे। इस तरह वह सुबह सात बजे से रात के दस बजे तक दुकान खुली रखते। साथ ही तेज तर्रार संगीत चलता रहता। कभी-कभी वह अपनी मेज को तबला बनाकर इतने जोर से थाप देते कि मेज पर रखा हुआ सारा सामान नीचे गिर जाता। एकाध बार तो उन्होंने कांच के मर्तबान तोड़ दिये। कई बार तो दुकान खुली छोड़कर भाग खड़े होते और वापस आते तो दुकान से माल गायब होता। यह देखकर उन्होंने आसपास की दुकानों से सामान उठाना शुरू कर दिया। जब लोगों ने उन्हें रोका तो वह चिल्लाये, "ठीक ऐसे ही अंडे, ऐसी ही डबल रोटियां मेरी दुकान पर थीं, तुम सब चोर हो।" यह देखकर लोगों ने शोर मचाया और खटपटराय बेबस होकर अपनी दुकान पर आ बैठे। उनका मन चाहा कि सिर नोच लें पर सिर पर बाल ही न थे। बेचारे सिर्फ सिर पीटकर ही रह गए।

एक बार की बात है। खटपटराय ने सोचा—औरों से हरदम खटपट करने से अच्छा है एक ऐसा नौकर रख लिया जाए जिससे वह जी भरकर झगड़ा भी कर सकें और फिर सुलह भी कर लें। उसने अपने मन की बात अन्य दुकानदारों से कह दी। सबने सोचा इस हर रोज की खटपट से अच्छा है इसके हवाले एक ऐसा बुद्धू नौकर कर दिया जाय जिससे यह जितना भी सर फोड़े वह कुछ जवाब न दे। ऐसा आदमी लाया कहां से जाए? सब सोच में पड़े थे। सभी लोग नीमू नाम के एक दूर के दूकानदार से मिले। उन्होंने उससे एक नौकर लाने की फरमाइश की। कहने की देर थी कि नीमू को अपना भतीजा बुद्धू याद हो आया। वह आधा पागल था और हर समय उसे अजीब-अजीब बातें सूझती रहती थीं। वह उसकी रोज-रोज की पागलों वाली हरकतों से तंग आ चुका था। इसीलिए उसने बुद्धू को खटपटराय को सौंप दिया और बोला, "मैं तो दो महीने के लिए बाहर जा रहा हूं, तुम इसे रख लो। इसकी तनख्वाह के अस्सी रुपये मुझे पहले ही दे दो, चालीस रुपये महीने के हिसाब से।" खटपटराय ने पहले तो सोचा फिर यह भी सोचा आखिर नीमू भी तो अपना इतना बड़ा भतीजा उसे

देकर जा रहा है, अस्सी रुपये दे देने में क्या हर्ज है। उसने नीमू को पैसे दे दिये और नीमू उसी रात अपनी पत्नी के साथ नगर से चला गया।

बुद्धू ने खटपटराय को देखा तो उसकी हंसी छूटी। वह उसके सिर पर हाथ मारते हुए बोला,"तबला क्यों उठा रखा है, उतारो इसे।"

"तबला...वह तुझे तबला नजर आता है। यह तो मेरा सिर है।"

"सिर नहीं तबला है, देखो-देखो बजता है।" बुद्धू ने उसके सिर पर तड़ातड़ अंगुलियां मारकर आवाज करनी शुरू कर दी।

खटपट की गर्दन में बड़ी-बड़ी गिल्टियां थीं जिसका आपरेशन होना था। बुद्धू ने उन गिल्टियों को देखा तो फिर तालियां बजाईं, "देखा, देखा बत्तखें, तुम्हारी गर्दन में...सारी यहां बैठी हैं...सुनो-सुनो तुम्हें आवाज आ रही है, वह देखो इन सबकी चोंच आहा...हा.. हां..."बुद्धू जोरों से हंसा और खटपटराय से बोला, "चलो खाना खाएं, भूख लगी है। मैं बताऊं तुम कितनी रोटी खाते होंगे। पूरी सात।"

खटपटराय सचमुच सात रोटी खाता था। उसने बुद्धू से कहा, "तुम्हें कैसे पता मैं सात रोटी खाता हूं ?"



बुद्धू बोला, "तुम्हारी गर्दन में सात बत्तखें हैं न—इसीलिये।" अब खटपटराय ने सचमुच गर्दन में पड़ी गिल्टियों को गिना वह सात थीं। अब तो उसे बुद्धू को बातों का विश्वास आने लगा। अनपढ़ और मूर्ख तो था ही, इसीलिए जब भी वह खाना खाने लगता उसे लगता उसकी गर्दन से सात बत्तखें चोंच निकालकर खाना खा जाती हैं। उसे अब लड़ना-वड़ना भूल गया। वह बहुत उदास रहने लगा। आखिर एक दिन उसकी बीवी ने पूछा, "क्या हुआ है आपको ?" खटपटराय बोला, "तुम डाक्टर को बुलवाकर मेरी गर्दन का आपरेशन करवा दो। यह बत्तखें निकलवा दो। हमारे बच्चे बत्तखों से खेलेंगे।"

खटपट की बीवी चोखीरानी को बात समझ न आई। तब खटपट ने सारी बात बताई तो चोखीरानी की खुशी का ठिकाना न रहा। खटपटराय ने बुद्धू को दुकान सौंपकर आपरेशन करवा लिया। दो महीने बाद जब दुकान पर पहुंचा तो उसने देखा नीमू दुकानदार बुद्धू को ले जाने के लिए आया है। खटपटराय ने बहुत मनाया पर नीमू बुद्धू को लेकर चला गया।

बुद्धू बोला, "खटपटराय को उसके अस्सी रुपये वापस कर दो।"

"वह क्यों ?" नीमू ने पूछा। बुद्धू ने कहा, "तुम मुझे उसके हाथों सौंपकर अस्सी रुपये ले गये थे, उसने तुम्हें तुम्हारा बुद्धू लौटा दिया। तुम उसे उसके पैसे लौटा दो।" नीमू ने सोचा, बात तो ठीक हैं जब खटपटराय ने मेरी चीज़ वापस दे दी तो मैं भी उसके रुपये क्यों न वापस दे दूं। यह सोचकर नीमू ने अस्सी रुपये वापस दे दिये। खटपटराय ने झटपट पैसे जेब में रख लिए और वह आगे की सोचने लगा।

खटपटराय बुद्धू के चले जाने से बेहद उदास हुआ। उसे समझ नहीं आता था कि आखिर चखचख करे भी तो किससे ? सभी दुकानदार तो उसे देखते ही मुंह मोड़ लेते थे।

अभी कुछ दिन बीते होंगे कि खटपटराय ने नीमू को एक व्यक्ति के साथ आते देखा। वह तपाक से नीमू का स्वागत करते हुए बोला, "कहो नीमू, बुद्धू गांव से आ गया क्या ?"

नीमू हंसकर बोला, "बुद्धू नहीं आया तो क्या, देखो यह चन्दू लाया हूं। बस एक महीने के बाद वापस कर देना।" और फिर उसने हाथ बढ़ाया, खटपटराय ने उसे तुरंत चालीस रुपये दिये। उसने चंदू को बड़ी हसरत से देखा, फिर बोला, "तुम एक महीने बाद चंदू को ले जाना और मेरे रुपये वापस कर देना।"

चंदू ने जब दोनों की बातें सुनी तो भौंचक्का रह गया। नीमू ने चंदू को हंसकर कहा, "हम दोनों एक दूसरे की ऐसे ही मदद करते हैं, समझे। तुम्हें तो रोटी-पानी ही चाहिए न, वह तुम्हें मुफ्त मिलता रहेगा।" तब चंदू ने दो मूर्खों की बात समझ ली।

नीमू ने चालीस रुपये जेब में रखे और बोला, "अच्छा चंदू ! खटपटराय का पूरा मन बहलाना, बात-बेबात पर जुबान मत लड़ाना। तुझे भरपेट खाना कपड़ा मिलेगा।"

"एं ! भरपेट कपड़ा।" चंदू ने नीमू से पूछा। नीमू हंसा, "अबे मूरख पेट भरने के लिए कपड़ा नहीं चाहिये। कहीं से अक्ल उधार ले आ तब तेरे पल्ले बात पड़ेगी। अच्छा तो मैं चला।"

और नीमू अब चंदू को छोड़कर चल दिया।

खटपटराय ने चंदू को गौर से देखा। वह लम्बा-चौड़ा और खूबसूरत था तथा उसने फटे पुराने कपड़े पहने हुए थे। उसे उस पर दया आई। वह चंदू को कपड़े देकर बोला, "चलो पहले तुम कपड़े बदल लो।"

चंदू तो इसी मौके की ताक में था, बोला, "नहीं, नहीं मैं नहीं बदलूंगा, मुझे रोटी दो, भूख लगी है।" खटपटराय ने झटपट अपनी रोटी का डिब्बा उसके सामने खोल दिया और बोला, "तुम भूखे हो। लो खाओ, चंदू।"

चंदू यह सुनकर जोर-जोर से रोने लगा और साथ ही खाना भी खाने लगा। खटपटराय ने पूछा,"रोते क्यों हो ?" चंदू जोरों से रोते हुए बोला, तुमने मुझे 'भूखे' कहा —"खटपटराय की आंखे भर आईं और प्यार से बोला,"नहीं नहीं...मैं हूं...मैं..."

चंदू बोल उठा, "तो गांठ बांध लो। मुझे भूखा न कहना, हां नहीं तो मैं भाग जाऊंगा। हां गांठ बांध लो मेरी बात..."

"गांठ बांध लूं, पर कहां। खटपटराय ने अपने लम्बे कुर्ते और पाजामे को देखा, कहां गांठ बांधू ? वह सोचने लगा। तब दुबारा कहा कि"गांठ बांध लो—यानी ऐसा समझ लो। खटपटराय को भूख लगी तो देखा सारा खाना चंदू खा गया है। उसने गुस्से से चंदू से कहा, "तुम सब कुछ खा गये। अब मैं क्या खाऊं ?"

चंदू बोला, "मेरा सिर खाओ।"

खटपटराय ने एक पल चंदू के सिर को देखा और फिर जोर से चहलकदमी करने लगा। चंदू ने यह देखा तो उसकी दुकान से डबलरोटी उठा ली। एक अचार का डिब्बा खोल लिया और एक कागज़ का टुकड़ा उठाकर उस पर डबलरोटी और अचार लाकर खटपटराय के पास ले आया। खटपटराय भूख से बेहाल था। चंदू के हाथ में खाना देखकर वह उस पर झपट पड़ा और दो डबलरोटी और पूरा डिब्बा अचार का डकार गया। फिर दोनों ने मिलकर चाय पी। तभी दुकान पर कोई डबलरोटी खरीदने आया। खटपटराय ने जब देखा डबल-रोटी गायब है तो वह चंदू पर चिल्लाया, "डबलरोटी कहां गई !"चंदू ने जवाब दिया—"आपके पेट में।"

खटपटराय चंदू पर झपटा, "अच्छा तो मेरी बिल्ली मुझ पर ही म्याऊं, अरे उस डबल-रोटी के पैसे कौन देगा ?"

चंदू बोला, "अच्छा तुम नीमू के रुपयों में से काट लेना।" खटपटराय कुछ संभलकर बोला, "हां हां ठीक है।" फिर चन्दू बोला।

"यह सब अक्ल के काम हैं खटपटराय जी। हाय ! कहीं अक्ल उधार मिलती तो हम दोनों दस रुपये की अक्ल उधार ले आते और फिर मिलकर उसे बांट लेते।" चंदू ने सभी बातें एक ही लय में कह दीं।

चंदू की बात सुनते खटपटराय बोला, "उधार तो इन दुकानों पर कुछ भी नहीं मिलता। तुम एक काम करो, दस रुपये ले जाओ और नकद देकर अक्ल ले आओ।"

चंदू ने यह सुना तो सोचने लगा। सभी लोग अक्ल उधार लेने की बात करते हैं। नकद रुपया देकर कोई अक्ल नहीं लेना चाहता। मैं रुपये लेकर जाता हूं, कोई-न-कोई तो अक्ल का धनी अक्ल बेचेगा ही। यह सोचकर उसने खटपटराय से दस रुपये ले लिए। चंदू ने एक बड़ा-सा कटोरा भी उठा लिया और जाने लगा। तभी खटपटराय को ध्यान आया, अरे यह तो मेरी कमाई के दस रुपये ले जा रहा है। उसने जोर से चंदू को आवाज लगाई, "अरे चंदू, यह दस रुपये कौन देगा?"

चंदू बोला, "नीमू के हिसाब से काट लेंगे।"

खटपटराय ने कहा, "हां, हां ठीक है।" और वह दुकान के भीतर चला गया।

अब चंदू हर दुकान के आगे कटोरा लेकर घूम रहा था। वह जहां भी जाता कहता, "अक्ल होगी भई, अक्ल?" दुकानदार उस पर जोर से हंस देते। एक-दो जगह तो जब उसने गुस्से से कहा, "अक्ल दे दो। उधार नहीं नकद खरीदने आया हूं" तो दुकानदार उस पर जोर से बरस पड़े और बोले, "तुम्हारी अक्ल क्या घास चरने गई है जो औरों से मांगते फिरते हो। भाग जाओ यहां से।"

एक दुकानदार ने तो चंदू को दो-चार चांटे जमा दिये और चंदू का कटोरा खाली का खाली रह गया।

सारे बाजार में चंदू के अक्ल मांगने की बात की चर्चा चल पड़ी थी। यह बात एक बुढ़िया के कानों में भी पहुंची। वह उसी बाजार में एक नुक्कड़ की दुकान पर घरेलू सामान बेचा करती थी। वह चंदू से बोली "कल मेरी दुकान पर आना और बन्द शीशी लेकर आना, तुम्हें अक्ल मैं दूंगी।"

"तुम कटोरा लेकर घूमते फिरते हो, जो भी अक्ल देगा वह तो एकदम उड़ जायेगी फिर तुम दुकानदार से झगड़ा करोगे। इसीलिये सबने तुम्हें मना कर दिया। कल सुबह आ जाना। मैं सारी अक्ल तुम्हारे लिए अलग डालकर रख दूंगी।"

चंदू की खुशी का ठिकाना न रहा। वह अगले दिन सुबह सवेरे एक बन्द शीशी लेकर बुढ़िया के पास जा पहुंचा। जाते ही उसने बुढ़िया को दस रुपये दे दिये। बुढ़िया ने झटपट एक शीशी में तेल डाल दिया और उसमें थोड़ा-सा गुलाब जल भी मिला दिया। फिर बड़े प्यार से बोली, "बस इसे आधा-आधा दो दिन सिर में डालकर बैठ जाना। उसके बाद तुम्हें वह अक्ल आयेगी कि तुम हैरान रह जाओगे। और हां, किसी को कहना मत वरना अक्ल उड़ जायेगी।" चंदू ने झटपट शीशी संभाली और वहां से भागा-भागा खटपटराय के पास जा पहुंचा और दोनों ने दुकान बन्द करके अन्दर ही अन्दर एक दूसरे के सिर पर तेल डाल

दिया। बुढ़िया ने तेल में जाने क्या मिला दिया था कि दोनों को खुमारी चढ़ने लगी और दोनों सो गये।

शाम को जब वे उठे तो एक दूसरे को देखकर खुश होने लगे। चंदू ने सोचा, "खटपटराय उसे देखकर खुश हो रहा है कि वह अकलमंद दिखाई दे रहा है।" खटपटराय भी चंदू के बारे में यही सोचने लगा था कि वह अक्ल से भरा हुआ विद्वान दिखाई दे रहा है। दोनों ने खुशी से हाथ मिलाया फिर दुकान का दरवाजा खोलकर बाहर झांककर देखा। उन्हें कुछ शोर सुनाई दे रहा था। थोड़ी देर में खटपटराय की बीवी वहां धाड़ें मारती, रोती-पीटती आ पहुंची। खटपटराय ने कड़ककर कहा, "यह क्या तमाशा है, तब वह बोली, "आज सुबह से दुकान बन्द देखकर सारी दुकानों पर शोर मचा था। लोग कहते थे किसी ने उन्हें कुछ खिला दिया है, हाय ! मेरा तो कलेजा फट रहा है रे...।"

सभी लोग खटपटराय के पास आ पहुंचे थे। खटपटराय की बीवी ने वहां चंदू को देखते ही सोचा, " जरूर यह कोई मक्कार है वरना आज तक खटपटराय ने ऐसी हरकत न की थी।" उसने बढ़कर चंदू को दुकान से बाहर कर दिया। खटपटराय चिल्लाया, चीखा, "अरे वह अक्ल...अक्ल है उसके पास, सुनती हो।"

"मैं अभी इसकी अक्ल ठिकाने लगाती हूं", कहकर वह तेजी से उस पर झपटने को पड़ी। चंदू में अब इतनी अक्ल आ गई थी कि कहीं खटपटराय की बीवी ने सचमुच अक्ल वापस मांग ली तो क्या होगा ? वह सिर पर पांव रखकर भाग खड़ा हुआ।

खटपटराय उसे भागते हुए देख रहा था। उसका जी चाहा कि वह भी चंदू के पीछे भाग जाये पर उसकी बीवी ने उसे ऐसे घूर कर देखा कि उसकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई।

खटपटराय को चंदू के चले जाने के बाद अब सिर्फ यही चिंता खाए जा रही थी कि वह तो इतना अक्लमंद हो गया पर सारे दुकानदारों में अक्ल नाम की कोई चीज ही नहीं आखिर वह उनसे खटपट कैसे करेगा...?

खटपटराय रात-भर अपनी पत्नी से झगड़ा करता रहा। उसे दुख था कि अक्लमंद चंदू उसके साथ नहीं था। बड़ी मुश्किल से अक्ल बटोरी गई थी। अब अक्लमंद लोग कहां मिलेंगे। बीवी को इतनी-सी अक्ल होती तो वह आखिर सारी खटपट घर में ही न कर लेता ? और फिर नीमू उसे चंदू को देकर गया था, वह आयेगा तो वह उसे क्या मुंह दिखाएगा ?

और अगले दिन सचमुच नीमू आ खड़ा हुआ। चंदू वैसे तो उसके पास पहुंच चुका था पर खटपटराय से रुपये ऐंठने का काम तो उसने ठेके पर ले रखा था। वह उसे मूर्ख क्यों न बनाता। नीमू को देखते ही खटपट के तो मानो पांव तले से जमीन खिसक गई। वह घिघियाने ही वाला था कि सामने पड़ी शीशी में उसे अक्ल के तेल की बूंदें दिखाई दीं। उसने झटपट उन्हें सिर में डाल लिया और झपट कर आगे बढ़ा। उसे लग रहा था उसके भीतर

एक नया जोश आ गया है, एक नया विश्वास उमड़ रहा है। नीमू उसके पास आते ही बोला, "कहां है चंदू ? "मैं भी यही पूछता हूं..." खटपटराय बोला, "अभी तो पूरे तीन दिन बाकी हैं फिर वह पहले कैसे भाग गया। जरूर तुमने बेइमानी करने की सोची होगी, वरना वह भागता कैसे ? बोलो...कहां है चंदू। तुमने सोचा चंदू को भी ले जाओगे और पैसे भी। लाओ निकालो रुपये।" और खटपटराय ने उसे कमीज़ का कालर पकड़कर खींचा। नीमू दुकानदारों को इकट्ठा कर लाया था और वे सभो नीमू को देख रहे थे। तभी पास वाली दुकान से चंदू भी निकल आया और हंसते हुए बोला, 'अब खटपटराय को अक्ल आ गई है, हम उसे बुद्धू नहीं बना सकते। ठीक कहते हो खटपटराय मैं नीमू के पास ही था।"

नीमू ने दांत पीसकर खटपटराय को उसके पैसे लौटाये और चलता बना। उसने मुड़ कर पीछे चंदू को हांक लगाई पर खटपटराय ने चंदू को अपने पास खींचते हुए, "जब तक इसके सिर में अक्ल की बूंदें बाकी हैं यह मेरे साथ रहेगा, वरना निकालो दस रुपये।" "दस रुपये" नीमू जोर से हंसा, "अरे ऐसे दस मूर्ख मैं यहां मुफ्त में खड़े कर दूं। रख लो इसी को अपने पास"और वह वहां से चला गया।

चंदू भी खुश था क्योंकि जब से उसने सिर में यह अक्ल की शीशी उड़ेली थी, उसे नई-नई बातें सूझती थी लेकिन उसकी बात सुनने वाला कोई नहीं था। नीमू से वह बात करता तो वह उसकी बातों का मजाक उड़ाता था। अब खटपटराय से खूब निभेगी, यही सोचकर उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। दोनों ने तपाक से हाथ मिलाया और चाय मंगाकर पीने लगे। चंदू बोला, "खटपट अब तो मेरे दिमाग में बहुत ऊंची बातें आती है।" "वह कैसे भला ?" खटपटराय ने पूछा।

तभी उन्होंने देखा सामने एक बिल्ली कूद कर आई और बड़े मज़े से मक्खन की टिकिया पंजों से फाड़ कर खा रही है। खटपटराय ने बिल्ली को देखा। चंदू खटपटराय का इशारा समझ गया। उसने झट से बड़ा शीशे का मर्तबान उठाकर बिल्ली को दे मारा। बिल्ली भाग गई और मर्तबान पूरा चकनाचूर हो गया। चंदू ने मर्तबान को देख फिर खटपटराय को गुस्से से लाल होते देखा तो उसकी हंसी छूट गई। वह चिल्लाया, "यह मर्तबान बिल्ली को मारने को किसने कहा था। कम्बख्त !"

"तुम समझोगे नहीं खटपटरायजी। नहीं समझोगे। मैंने शीशे का मर्तबान इसलिये मारा कि बिल्ली घायल हो जायेगी। उसको लगते ही मर्तबान के चकनाचूर होने पर सारे शीशे के टुकड़े रास्ते में फैल जायेंगे। इससे बिल्ली के पांव में चुभेंगे और बिल्ली बुरी तरह से घायल हो जायेगी। और फिर हमारी दुकान में कभी नहीं आयेगी।"

"वाह ! वाह ! क्या बात है,"खटपटराय ने चंदू की दूर की सूझ की दाद दी। "पर बिल्ली तो भाग गई, अब क्या करें।" खटपटराय ने पूछा। चंदू बोला, बिल्ली को दूध अच्छा लगता और चूहे अच्छे लगते हैं। दूध तो मंहगा है। हम चूहों के लिए चूहेदान लगा देंगे और फिर

चूहे पकड़ कर रखेंगे। बिल्ली जब चूहे खाने आएगी तो उसके पांव में कांच चुभेगा, कांच चुभेगा, तो फिर यहां कभी नहीं आयेगी।"

अब चंदू और खटपटराय दोनों चूहों का इन्तज़ार करने लगे। फिर उन्हें लगा चूहे को आने में देर लगेगी,इसीलिये उन्होंने पास की दुकान से एक तोता पिंजरे सहित खरीद लिया और वहीं रख दिया।

अब दोनों बिल्ली के आने की प्रतीक्षा में थे। वह पांच रुपये का मक्खन खा गई थी और बिल्ली को सजा देना बहुत जरूरी था।

खटपटराय चंदू के साथ देर तक बैठा रहा। दोनों ने दुकान में पड़ी सारी डबलरोटी, मक्खन आदि खा डाला। तभी पिंजरे में पड़ा हुआ तोता टें-टें करने लगा। दोनों ने एक दूसरे को देखा फिर तोते को देखा और फिर पिंजरा खोलने की सोची। चंदू ने तोते पर पूरी स्याही की बोतल उड़ेलकर कहा, "यह हमारा खरीदा हुआ तोता है। इसे थोड़ी देर के लिये बाहर घूमने के लिए भेज देते हैं।"

"हां, इसकी टांग में एक धागा बांध दो। पतंग की तरह उसे उड़ायेंगे...हा. हा. हा।" खटपटराय ने टें-टें करते तोते की एक टांग में धागा बांधा। दोनों ने पिंजरा खोल दिया और फुर्र से तोता उड़ गया। खटपटराय ने हाथ में डोरी संभाल रखी थी। इसीलिये दोनों खुश थे।

खटपटराय ने खुशी में ताली बजाई तो हाथ से धागा छूट गया। खटपटराय के तो जैसे हाथों के तोते उड़ गये हों।वह धागा पकड़ने को उछला पर तोता ऐसे उड़ रहा था जैसे गैस वाला गुब्बारा हो। चंदू और खटपटराय सिर थाम कर बैठ गये। दोनों ने हिसाब लगाया पांच रुपये का तोता था और पांच रुपये का मक्खन बिल्ली खा गई यानी दस रुपये और चार रुपये का मर्तबान टूट गया…इतना नुकसान! सोचकर खटपटराय ने सिर पीट लिया। चंदू बोला, 'ऐसा करना, यह चौदह रुपये काट लेना मेरे हिसाब से।" तभी एक खटपट की आवाज से दोनों चौंक उठे। दोनों ने देखा एक बिल्ली का बच्चा म्याऊं-म्याऊं करते हुए आगे बढ़ा और पिंजरे के खुले दरवाज़े से पिंजरे में आ बैठा। "म्याऊं-म्याऊं" सुनते ही चंदू और खटपट ने झटपट बत्ती जला दी और देखा बिल्ली का बच्चा उस पिंजरे से बाहर नहीं निकल सकता। दोनों की खुशी का ठिकाना न रहा।

दोनों ने पिंजरा बाहर रख दिया और सारी जगह साफ कर दी। तभी उन्हें बाहर से कुछ आवाजें सुनाई दी। वे दोनों बाहर आये तो बिल्ली के पिंजरे के पास ढेर सारे लोगों को इकट्ठा देखकर बहुत हैरान हुए। खटपटराय बोले, "बिल्ली के मौसेरे भाई हैं—यह आये हैं पैरवी करने। अरे बुला लाओ जिसे बुलाना हो। हां हमारा कितना नुकसान हुआ, यह भी पता है किसी को।"

तभी चंदू खटपटराय से धीरे से बोला, "जरा चुप हो जाओ, यहां तो मामला ही कुछ और है।"

खटपटराय चुप हो गया। दोनों ने बाहर देखा-लोग पिंजरे का भाव कर रहे थे। एक ने पूछा, "कितने में दोगे यह बिल्ली और पिंजरा। चलो हम बता देते हैं लाओ बीस रुपये में लाओ..."

"अरे इतनी सुन्दर बिल्ली...यह तो तीस रुपये में भी सस्ती है...।"

यह सुनकर खटपटराय ने सोचा जल्दी से इसे बेच दिया जाये। तभी चंदू बोला, "तुम तो बड़े मूर्ख हो जो बिल्ली का बच्चा तीस रुपये में बिक रहा है, उसे बेचा ही क्यों जाये। कहीं दूसरी जगह इसकी कीमत और ज्यादा होगी। हम आज रात को इसे सुपर बाजार के पास ले चलेंगे। देखना इसकी कीमत सौ रुपये मिलेगी, समझे।"

चंदू की बात सुनकर खटपटराय को बहुत खुशी हुई और वह दोनों अगले दिन सुबह-सुबह बिल्ली के पिंजरे को ले जाने की बात सोचने लगे। दोनों ने लपक कर बिल्ली का पिंजरा दुकान के अन्दर रख दिया।

सुबह-सुबह दोनों दुकान पर मोटा-सा ताला लटका कर, बिल्ली का पिंजरा उठाये हुए निकल पड़े। खटपटराय थोड़ी ही दूर जाने पर हांफने लगा था। इसीलिए उसने सोचा जब यह बिल्ली का बच्चा चल-फिर सकता है तो इसे यों ढोया क्यों जाये। फिर इसकी तो चार-चार टांगें हैं। ऐसे में इसे अगर पिंजरे से बाहर साथ-साथ चलाया जाये तब खाली पिंजरा उठाना तो जरा भी मुश्किल नहीं है—और यह सोचकर उसने पिंजरा खोल दिया। चंदू की नजर सामने पेड़ पर बैठे तोते पर थी। खटपटराय ने बिल्ली के बच्चे को जैसे-तैसे पिंजरे से निकाला ही था कि वह तेजी से भाग खड़ा हुआ। खटपटराय ने सिर पीट लिया। चंदू खटपट-राय पर चिल्लाया। खटपटराय चंदू पर।

दोनों बिल्ली को ढूंढने एक दूसरे से उल्टी दिशा में भागने लगे पर कुछ हाथ न लगा। दोनों दुकान पर लौट आये। खटपटराय बोला, "बिल्ली का बच्चा शायद नीले तोते की तलाश में गया हो। लगता है पति-पत्नी की तरह बिल्ली तोते का भी जन्म-जन्म का संबंध है। मैं तोते की तरह जब तक दुकान पर टें-टें करता हूं सब ठीक-ठाक रहता है, ज्यों ही घर जाता हूं मेरी पत्नी मुझे खाने को दौड़ती है।"

चंदू ने खटपटराय की बात गांठ बांध ली। खटपटराय फिर बोला, "अरे भैया, उससे गांठ बांध कर ही तो गठबंधन किया था। जा भैया, तू भी बिल्ली की तलाश कर, मैं दुकान पर बैठा हूं।"

चंदू दुकान से चला गया था। खटटपराय की दुकान पर अब कोई भी बिल्लो म्याऊं करती तो वह उसी से चखचख शुरू कर देते। फिर जब बिल्ली जोर से गुर्राती तो बेचारे मन मारकर चुप हो जाते।

मुस्कुराने की बात

पोपटलाल की आदत थी कि वह हर समय हंसते-मुस्कुराते रहते थे। यही आदत अब उनके बेटे पंचू की भी हो गई थी। घर की दीवारों पर उन्होंने लिख रखा था, मुसीबतों पर सदा हंसो। हंसते-हंसते जीना ही जिन्दगी है।

जब पोपटलाल की पत्नी मेहमानों को आते हुए देखती और कह उठती..."लो नई मुसीबत आ गई" तो पोपटलाल लगातार मुस्कराना शुरू कर देते थे। अब तो पोपट की जगह उनका बेटा पंचू लेने लगा था। वह हर समय मुस्कुराता ही रहता। यहां तक कि वह पोपट की भी हर बात को मुस्कुराते हुए सुनता और हंस देता। पोपट की हंसी और फिर धीरे-धीरे कम होती गई और पंचू की बढ़ती चली गई।

एक बार की बात है पोपटलाल पंचू को अपने साथ एक दावत में ले गये। उनकी आदत थी कि वह दावत से कुछ न कुछ जेबों में भर लाते। इस बार जब उन्होंने कांटे, छुरियां और चम्मच, नैपकिन में लपेट-लपेटकर जेब में डाले तो उनकी नज़र पंचू पर पड़ी। पंचू उन्हें देख रहा था और मुस्कुरा रहा था।

कम्बख्त कहीं का। यह तो इतना मूर्ख है कि अभी भरी सभा में मेरा मज़ाक बना देगा— और उन्होंने एक ही बार में सब चीज़ें जेब से वापस निकालीं और मेज पर रख दीं। अब वह पंचू से ज़रा दूर खड़े हो गये। कपड़े के नैपकिन देखकर उन्हें ध्यान आया, रूमाल भी इतने मंहगे हो गये हैं। यह भी जेब में ठूंस लूं और उन्होंने एक-एक करके पांच नैपकिन उठा लिये। फिर सामने देखा तो फिर पंचू को मुस्कुराते देख उनके गुस्से का ठिकाना न रहा। सोचने लगे यह तो मुझ पर हर समय ऐसे ताक लगाये बैठा है जैसे मेरी निगरानी करने के लिए ही पैदा हुआ हो।

परेशान होकर बेचारे ने नैपकिन वापस रख दिये। बेटे को लेकर घर की ओर वापस चल पड़े। रास्ते में उसे झंझोड़ते हुए बोले, "पूरी दावत में तू सिर्फ मुझे ही घूरता रहा और कोई काम नहीं था तुझे ?"

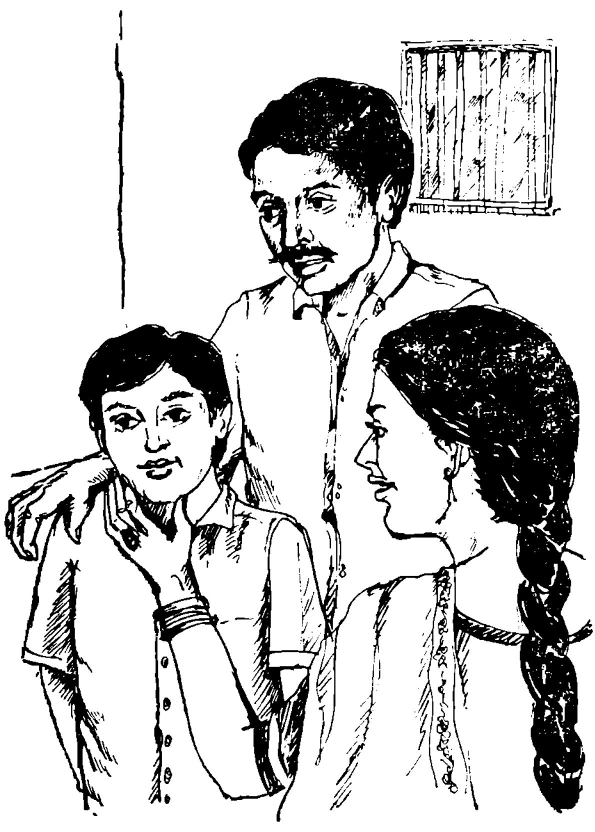
"हां पिताजी, मां ने कहा था कि पिताजी का ध्यान रखना।" पंचू ने मुस्कराते हुए कहा।

"ओह ! तो तुम्हारी मां ने मेरे पीछे जासूस छोड़ रखा था। अरे मैं भी तुम्हारे लिए ही सारी चीजें बटोर कर लाता हूं।"

पांव पटकते हुए वह घर पहुंचे तथा पत्नी पर बरसना ही चाहते थे कि उन्होंने देखा पंचू फिर मुस्करा रहा है। सामने देखा तो न मुस्कराने वाली पत्नी भी पंचू के साथ मिलकर मुस्करा रही है।

पोपटलाल ने सिर पीट लिया। घर में जहां-जहां हंसने, मुस्कराने के बारे में लिखा था। उन्होंने उन पर काली स्याही फेर दी। "हंसना-मुस्कराना मना है" लिख कर वह हर जगह लगाना चाहते थे कि तभी उन्होंने फिर देखा पंचू और उसकी मां दोनों खड़े मुस्करा रहे हैं। पोपटलाल को लगा मुस्कराहट जैसे छूत का रोग है जो एक से दूसरे तक, दूसरे से तीसरे तक सब जगह पहुंचता है। फिर उनको हंसी छूटने वाली थी कि दोनों को सामने पाकर पोपटलाल की भौंहें टेढ़ी होने लगीं। अब वह सोचने लगे हंसी, मुस्कराहट भी छूत का रोग नहीं बल्कि पानी है। जहां गड्ढा देखता है उधर दौड़ता है। पत्नी के गालों में तो गड्ढे पड़ते ही थे, पंचू के भी गाल में गड्ढा पड़ने लगा। पोपटलाल अपनी सारी हंसी उन दोनों को बांटकर उदास, मन मारे बैठ गया।

रात का समय था। पंचू को नींद आ रही थी। उसे कहीं से खटखट की आवाज सुनाई दी। पंचू उठ बैठा। सामने ही चार चोर घर का सारा सामान एक गठरी में बांध रहे थे। पंचू था तो मूर्ख। उसे लगा घर का बिखरा हुआ सामान उन्होंने समेट दिया है। वह लगा मुस्कराने।



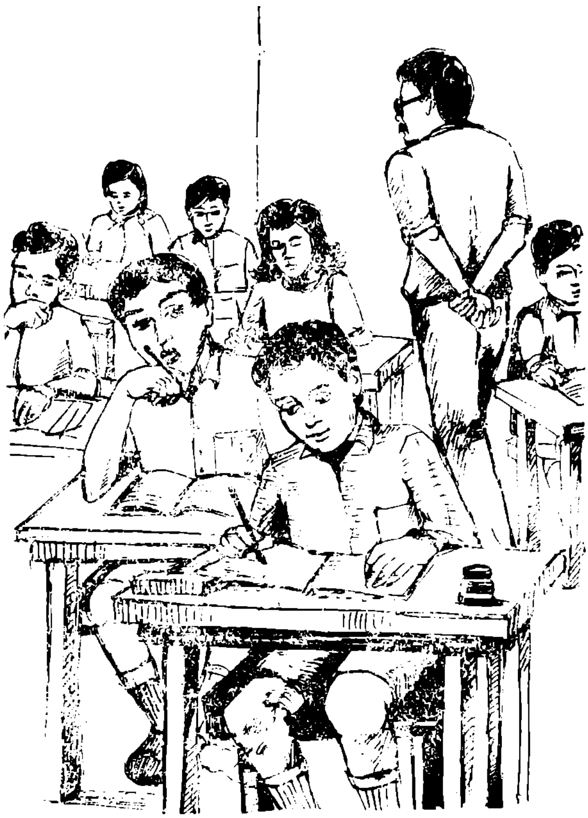
चोरों ने यों धड़ल्ले से पंचू को मुस्कराते देखा तो समझ गये जरूर दाल में कुछ काला है वरना इस लड़के को चोरों के सामने आने से डर लगता। उन्होंने सामान वहीं छोड़ा। भागने ही वाले थे कि पंचू ने फिर उन पर मुस्कराते हुए एक नजर डाली। वे सिटपिटाये से अपना सारा चोरी का माल भी वहीं फेंक कर भाग खड़े हुए।

इधर खटखट की आवाज से पोपटलाल व उसकी पत्नी भी जाग चुके थे और वे खिड़की से चुपचाप सब कुछ देख रहे थे। वैसे तो वे शोर मचा देते लेकिन उन्हें लगा कि कहीं चोर पंचू को न मार डाले इसीलिये वे दुबके-दुबके से सब कुछ देखने लगे।

जब चोर भाग गये तो वे दोनों भागे-भागे आये और पंचू को शाबाशी दी। पोपटलाल ने देखा—पंचू को प्यार करके उसकी मां फिर पंचू के साथ मुस्कराने लगी थी।

विकास

विकास अपने मां-बाप का इकलौता बेटा था। उसके पिता बहुत बड़े व्यापारी थे और विकास मनमाना रुपया खर्च करता था। वह अपने दोस्तों में भी खूब रुपया लुटाता था। पढ़ाई-लिखाई में यों भी उसका मन न लगता था। इसीलिये वह हर किसी को डराने और उससे काम करवाने की तिकड़में लड़ाता रहता। वैसे कक्षा में जब मास्टरजी होते और कक्षा में परीक्षा होती तब वह नकल करके अपना काम निकाल लेता। नकल करने में विकास को मजा आने लगा था और वह नकल करने के नये से नये तरीके खोजने लगा। वह सोचता कि ऐसी नकल की जाये कि किसी को शक भी न हो।



वार्षिक परीक्षा में वह नितिन के पास बैठा हुआ था। प्रश्नपत्र काफी कठिन था। विकास ने नितिन की आंखों ही आंखों में कह दिया—अगर नकल नहीं करवायेगा तो बाहर चलकर तुझे भी देख लूंगा।

नितिन भी था शैतान लेकिन विकास से डरता था। विकास यों ही कक्षा के बहुत से बच्चों की मरम्मत कर चुका था। इसीलिये नितिन थोड़ा टेढ़ा होकर बैठ गया। विकास ने अन्धाधुन्ध नकल की और फिर सबसे पहले प्रश्नपत्र करके परीक्षा कक्ष से बाहर चला गया। नितिन से उसने पहले ही कह दिया था—"साथ-साथ मत निकल कर आना वरना मास्टरजी को शक हो जायेगा।"

इसी तरह रोज़ वह नितिन की सहायता से नकल करता रहा, पर यह क्या! जब परिणाम निकला तो विकास के होश गुम हो गये। नितिन कक्षा में प्रथम आया था। विकास चिल्ला उठा, "वाह सर! मैंने नितिन की हू-बहू नकल की है। नहीं-नहीं, नितिन ने तो मेरी नकल की है, फर्स्ट मुझे आना चाहिए। फेल उसे होना चाहिए, मैं पेपर खुलवाऊंगा। यह सरासर अन्याय है, घोर अन्याय।"

उसकी आंखों में खून उतर आया। उसका जी चाहा आगे बढ़कर नितिन का गला दबोच डाले। तभी हैडमास्टर साहब आ गये। दोनों को बुलाया और बोले, "बोलो किसने किसकी नकल की है।"



नितिन चुप रहा। विकास ने नितिन का कालर पकड़कर कहा, "इसने...इसने... इसने...।"

अगले ही दिन विकास के पिता भी आ पहुंचे। पेपर खुलवाये गये। विकास और नितिन की उत्तर पुस्तिकाएं बिल्कुल एक जैसी नहीं थीं। नितिन ने कुछ काट-काट कर लिखा था। नितिन हंसते हुए बोला, "विकास ने मुझे मार डालने की धमकी दी थी। इसीलिए मैंने पहले जो उत्तर लिखे, बाद में उनमें परिवर्तन कर दिया।"

"क्या, क्या मतलब।" विकास ने फटी-फटी आंखों से नितिन को देखा।

"हां, मैं नहीं चाहता था कि कोई यह जान सके कि तुम नकल कर रहे हो। तुमने खुद ही सारी क्लास में शोर मचाकर अपने नकल करने की घोषणा की है और इसीलिये मुझे दो-दो बार सारे पर्चे करने पड़े। तुम्हारे लिये तुम्हारे जैसे उत्तर, अपने लिये अपने जैसे।"

विकास के पिता ने गुस्से से विकास को देखा। विकास नितिन को मार डालने की धमकी देने लगा। विकास के पिता ने विकास को भरपूर तमाचा लगाया और बोले, "नकल करने में भी अक्ल की जरूरत होती है। तुमने अच्छा किया नितिन जो मेरी आंखें खोल दीं। मैं इसे सीधा करूंगा ताकि फिर यह कभी किसी को डरा धमकाकर अपना उल्लू सीधा न कर सके।"

विकास को याद आया कि पिताजी के पास वह हंटर था जिससे उन्होंने एक बार एक चोर की खाल उधेड़ कर उसे अधमरा कर दिया था। वह कांप उठा। बोला, "मुझे माफ़ कर दो पिताजी, अब कभी ऐसा नहीं होगा। कभी नहीं, कभी नहीं।"

हैडमास्टर ने तब विकास के पिता को समझाया, "गलती तो आपकी है। आपने कभी इस ओर ध्यान ही नहीं दिया कि विकास को आपके रुपये से ज्यादा आपकी जरूरत है। बच्चे प्यार से सीखते हैं, सिर्फ मार से नहीं। और फिर सुबह का भूला शाम को भी घर आ जाये तो समझें देर नहीं हुई।"

"देर...अरे देर तो हो गई...मुझे तो मीटिंग में जाना था..." कहकर विकास के पिता लौटने वाले ही थे कि विकास ने उनका हाथ थाम लिया और बोला, "पिताजी एक महीने बाद फिर परीक्षा होगी आप...।" "हां हां बेटा...। मैं सब काम छोड़कर भी तेरा ध्यान रखूंगा बेटा..." और वह भारी मन, भारी कदमों से घर की ओर बढ़ रहे थे। घर जाकर उन्होंने दफ्तर में फोन कर दिया, "वह देर से आयेंगे।"

—

कहानी क्लिनिक

बिरजू नामक एक गरीब लड़का अपने दादा के साथ गांव में रहता था। वह अक्सर अपने आसपास के लड़कों को बुलाकर कहता—"कहानी सुनोगे?" लड़के भागे-भागे आते। बिरजू दादा के पास आता और कहता "दादा उन्हें कहानी सुनाओ।" उसके दादा रोज़ उन्हें कहानी सुनाते और बिरजू उन बच्चों को घर छोड़ने जाता। बदले में वह उनसे पढ़ने की मज़ेदार किताबें ले लेता और कहता, "देखो रात भर दादा को कहानी सुनाता हूं। दादा उस कहानी को सुनकर नई कहानी बनाते हैं, फिर तुम्हें सुनाते हैं।"



वे बच्चे उसे कहानी की किताबें खुशी-खुशी दे जाते थे।

बिरजू यों तो पढ़ना-लिखना जानता था लेकिन कभी पढ़ने के लिये स्कूल नहीं गया था। दादा ने उसे घर पर ही पढ़ाया-लिखाया और उसे कहीं पढ़ने के लिये न भेजा क्योंकि

वह खुद बीमार रहते थे। बिरजू अपना मन इसी तरह बहलाया करता था। कुछ ही दिनों में बिरजू के दादा की हालत खराब होने लगी। बिरजू को चिन्ता हुई। वह गांव के बाहर की ओर भागा। सड़क पर आने-जाने वाले लोगों से बोला, "कहानी सुनोगे। लोग हंसते और चल देते। बिरजू बहुत निराश हुआ। वह वापिस लौटकर जाने वाला ही था कि सामने उसे एक थका-हारा आदमी दिखाई दिया। वह आदमी हांफ रहा था। वह थोड़ी देर चलने के बाद वहीं एक पेड़ के पास निढाल होकर बैठ गया। बिरजू भागा-भागा उसके पास पहुंचा और बोला, "क्यों भई कहानी सुनोगे ? सिर्फ दो रुपये में बढ़िया कहानी !"

बिरजू की बात सुनकर उस आदमी के चेहरे पर हंसी की लहर दौड़ गई। वह बिरजू से बोला, "हां दोस्त, सुनाओ कहानी—दो रुपये वाली।"

"मैं नहीं मेरे दादाजी सुनाते हैं—तुम चलो तो।" बिरजू ने उस आदमी का सूटकेस उठाया और आगे-आगे चलने लगा। बिरजू ने उससे चलते-चलते पूछा, "अच्छा तुम्हारा नाम क्या है ?"

"मेरा नाम—तुम मुझे श्याम चाचा बुला सकते हो।" वह व्यक्ति बोला।

बिरजू जल्दी-जल्दी कदम बढ़ा रहा था। चलते-चलते वह रह-रह कर मुड़ कर देख लेता कहीं वह चाचा आधे रास्ते से तो नहीं मुड़ गये।



घर पहुंचते ही उसने दादा को आवाज लगाई, "दादा कहानी सुनने वाले मिल गये—दादा कहानी सुनाओ ।"

पर दादा खांसी के मारे बेहाल थे। बोले, "आज नहीं बेटा ।" और फिर खांसने लगे । बिरजू को दादा पर गुस्सा आया । उसने सोचा था दो रुपये मिलेंगे तो दादा की दवाई आ जायेगी । डबलरोटी भी ख़रीद लाऊंगा और दो दिन की चाय भी मिल जायेगी । लेकिन दादा की हालत अब देखी नहीं जाती थी । वह श्याम चाचा से बोला, "आज दादा वाली कहानी मैं सुनाता हूं तुम्हें"—यह कहकर उसने कहानी शुरू कर दी -

"किसी जंगल में एक तोता रहता था। वह चुपचाप उड़ता, अपने लिये फल तोड़ता, खाता, चोंच भर पानी पीता और फिर अपने घोंसले में जा बैठता । एक बार की बात है। उसने देखा पेड़ के पास ही एक छोटा-सा तोता अधमरा पड़ा है । उसने उसे उठाया और उस को पालना शुरू कर दिया । कुछ ही दिनों में तोता उड़ने लगा और बड़े तोते के लिए फल तोड़ तोड़कर लाने लगा । एक बार की बात है बड़े तोते को बहुत जोर से खांसी आई । वह खांसते खांसते बेहद बेहाल हो गया । छोटा तोता डाक्टर के पास गया और बोला, "मेरे दादा बीमार हैं उनका इलाज करो ।" डाक्टर बोला, "बीमार हैं तो इलाज के लिये फीस दो ।"

"मेरे पास पैसे नहीं हैं, छोटा तोता रोया पर डाक्टर न माना । इधर बड़ा तोता खांसते-खांसते बेहोश हो गया और उसने दम तोड़ दिया । छोटे तोते ने जब यह देखा तो वह गुस्से से पागल हो गया । उड़ता-उड़ता वह डाक्टर के पास गया । उसने उसके सिर पर चोंच मारी जिससे तोते की चोंच हमेशा के लिये लाल हो गई । होती है न लाल-लाल चोंच ।

श्याम चाचा उसे दो रुपये देने ही वाले थे तभी उसके दादा ने खांसते हुए कहा, "अच्छा कहानी सुनाकर पैसे ले रहा है नालायक ।" और उन्होंने बढ़कर उसे दो चांटे जड़ दिये ।

श्याम चाचा ने बिरजू को दादा से अलग किया। बिरजू रोते-रोते बोला, "इन दो रुपयों से मैं दादा की दवाई लाऊंगा । नहीं तो मेरे दादा मर जायेंगे, चाचा ।"

बिरजू की बात सुनकर श्याम चाचा की आंखें भर आई। वह उससे बोले, "मैं खुद डाक्टर हूं बिरजू । मैं तुम्हारे दादा को ठीक कर दूंगा बिरजू । रोओ मत ।"

श्याम चाचा अब वहां रोज़ आने लगे और बिरजू के दादा के साथ और रोगियों की जांच भी करने लगे । एक दिन बिरजू बोला, "श्याम चाचा तुम यहीं क्यों नहीं रह जाते । तुम मरीज़ देखना । मैं मरीजों को कहानी सुनाऊंगा । फिर हमारे गांव में कोई बीमार नहीं रह जायेगा ।"

कहते हैं श्याम चाचा ने बिरजू की बात मान ली । फिर एक बड़ा-सा बोर्ड लटकाया । "कहानी क्लिनिक" और अब बिरजू भी वहां काम सीखने लगा ।

—

उसकी खोज

किसी नगर में एक बहुत बड़ा पीपल का पेड़ था। उसकी जड़ें दूर-दूर तक फैली हुई थीं। टहनियां भी जमीन पर लटक आई थीं और वहां पत्तों को बिछा-बिछा कर हर थके-हारे को मानो वह बैठने के लिये बुलातीं। वर्षा के दिनों में तो उस पेड़ के पत्ते और भी फैल जाते और पूरा पेड़ एक तम्बू की तरह तन जाता था।

उसी पेड़ के नीचे अनु अपनी बूढ़ी दादी के साथ रहती थी। जब भी बारिश होती अनु का जी चाहता वह खूब भीगें। खूब मजे करे, पर दादी उसे अपने से चिपकाये बैठी रहती। जब तक पानी बंद न हो जाता, आसपास का पानी सूख न जाता, वह उसे बाहर न जाने देती। एक दो बार जब अनु ने बहुत जिद की तो दादी ने कहा, "हमारे पास और कपड़े नहीं है बेटी। यह भी गीले हो जायेंगे तो कैसे गुजारा होगा।" तब अनु का जी चाहा वह भाग कर सारे पत्ते तोड़ ले और उन पत्तों के कपड़े बना-बनाकर सब गरीबों में बांट दें।



एक दिन की बात है। अनु ने देखा बहुत तेज बारिश हो रही है। सारे पक्षी मजे से बारिश में नहा रहे हैं। वह भाग कर उनके पास जाना चाहती थी। उसने एक बड़ी-सी पत्तों वाली टहनी को तोड़ा और दादी से बोली, "मैं इस पत्तों वाली टहनी को सिर पर रखकर जाऊंगी, तब तो नहीं भीगूंगी न।"

बूढ़ी दादी ने अनु की आंखों में देखा। वह बाहर घूमने के लिये ललक रही थी। वह अनु से बोली, "चल बेटा कोई ऐसी चीज देखें जिससे तुम बारिश में घूम भी लो और गीली भी न हो।"

"ऐसा हो सकता है क्या दादी मां," अनु ने पूछा। दादी हंसकर बोली, "हो सकता है। आओ कोई तरकीब सोचें।"

वे दोनों देर तक अपनी-अपनी अक्ल लड़ाती रहीं। फिर दादी ने अपनी गठरी उठाई और उसमें से फटे-पुराने, नीले-पीले कपड़ों के टुकड़े निकाल कर सुई-धागा हाथ में ले लिया।

"यह क्या दादी मां", अनु ने फिर पूछा। "तू वह जरा बड़ी-सी टहनी ला तो।" दादी ने अनु से कहा। अनु भाग कर टहनी ले आई। अब दादी ने उन पत्तों के साथ बड़े-बड़े कपड़े के टुकड़े भी टहनियों से बांध दिये। फिर उन पर पानी डालकर देखा, कहीं पानी टपक-टपक कर नीचे नहीं आता। अनु यह सब देख रही थी। लेकिन समझ नहीं पा रही थी।

आखिर दादी यह सब क्यों कर रही है। अब दादी ने उस रंग-बिरंगे कपड़ों वाली टहनी को नीचे जमीन पर गाढ़ दिया। अनु निराश हो गयी। उसने सोचा था दादी उसे बारिश में जाने के लिये कोई नई चीज दे रही है। बारिश भी थम गयी थी और यह सब देखकर अनु गुस्से में मुंह लटकाये बैठ गयी।

थोड़ी ही देर में फिर बारिश होने लगी। दादी ने उस टहनी को हाथ में उठाया और अनु से बोली, "ले बेटी, यह उठा और इसे सिर पर लगाकर देख कि बारिश में घूम सकती है या नहीं। मैंने छोटी-सी छत तेरे लिए बना दी है—यानी यह तेरे सिर पर छत।"

अनु ने टहनी को खुशी से जोर से घुमाया और बोली, "वाह री छत री ...वाह मेरी छत री," और तेजी से बाहर निकल पड़ी।

सारे बच्चों ने देखा तो सबने दादी को घेर लिया। दादी को वे सब टहनियां ला-लाकर देने लगे। नीले, पीले, चमकीले कपड़े भी ले आये और दादी ने छोटी-छोटी छतें सबके लिये बना दीं।

कहते है एक दिन अनु की वह छोटी-सी छत तेज हवा के साथ उड़ गयी और एक बहुत बड़े कारीगर के पास जा पहुंची। कारीगर ने इस टहनी को जांचा-परखा और ठीक उसी नमूने की छोटी-छोटी छतें बना दीं। एक दिन बूढ़ी दादी अनु के साथ जब बाजार जा रही

थी। तो उसने एक दुकान पर अनु की वह टहनी देखी। अनु ने भी देखा और भाग कर वहां जा पहुंची। टहनी को उसने उठाकर खूब चूमा, प्यार किया और बोली, "वाह री छत-री, तेरे बिना मैं बारिश में घूम भी नहीं सकती थी।" कारीगर ने छत-री सुना तो बस फूला न समाया और उसने जो टहनीनुमा टुकड़ों पर कपड़े टांक-टांक कर रखे थे उनका नाम छतरी रख दिया।

उसी दिन से छतरी धूप पानी में बड़े मजे से घूमती है। बूढ़ी दादी अपनी अनु के साथ अब भी उसी पेड़ के नीचे रहती है। कोई नहीं जानता पहली छतरी का आविष्कार अनु की बूढ़ी दादी ने ही किया था। वह कारीगर मजे में है। उस पर उसे ढेरों सम्मान मिल चुके हैं...ढेरों पुरस्कार मिल चुके हैं और बूढ़ी दादी के सिर पर आजकल वह पत्तों वाली छत भी नहीं रही क्योंकि पतझड़ शुरू हो चुका है।

बच्चे-ही-बच्चे

दीनानाथजी का एक मित्र था। उसका नाम था राम सहाय। दीनानाथजी प्राय: अपनी पत्नी से कहते, "चलो जरा राम सहाय के घर हो आएं।" लेकिन दीनानाथजी की पत्नी न मानती। वह तुनक कर कह उठती, "उसके जब आठों बच्चे आकर 'चाचा जी, नमस्ते' कहकर घेर लेते हैं तो मुझे लगता है जैसे अभी रास्ता रोक लेंगे और वहां से हिलने न देंगे। दो-चार बच्चे तो हमेशा-हमेशा साथ घर पर भी आना चाहते हैं। फिर इससे बड़ी बात यह है कि आप राम सहाय का हाल एक बार पूछने जायेंगे तो वह दस बार आयेगा।"

"अच्छा ठीक है तुम मत जाओ पर मेरे दोस्त की हंसी उड़ाने की जरूरत नहीं।" यह कहकर एक दिन दीनानाथ जी अपने मित्र राम सहाय के घर की ओर चल दिये।

राम सहाय एक छोटे से मकान में रहता था। जैसे उसकी अपनी हालत थी वैसी ही मकान की भी। टूटे हुए दरवाजे, टपकती छतें और छोटे से आंगन में खेलने वाले आठ बच्चे। जिनमें सबसे बड़े लड़के की उम्र कोई बारह वर्ष होगी। पत्नी श्रीमती रामकली का चेहरा हड्डियों का ढांचा ही रह गया था। आंखों के नीचे काले गड्ढे पड़े थे और एक बच्चा कन्धे पर था। सब ओर मक्खियां भिनभिना रही थीं। दीनानाथ के वहां पहुंचते ही सब जैसे बड़ी तेजी से किनारे हो गये। रामकली ने भी बच्चे का हाथ झटककर अलग किया और कहा- "आइये, आइये।"

राम सहाय ने कहा, "चलो गरीबों को याद तो किया। आज ही हमें आपकी बहुत जरूरत थी।"

"जरूरत! हां कहिये मैं क्या मदद कर सकता हूं?" दीनानाथजी ने कहा।

तब तक राम सहाय के दो लड़के नाक पौंछते हुए वहां आ खड़े हुए तथा एक दूसरे के बाल नोंचने लगे। राम सहाय ने बहुत कोशिश करके दोनों को अलग किया और दीनानाथ से बोला, "आज तुम्हारी भाभी के दांत में बहुत दर्द है। दो मिनट यहां बैठ जाओ। तो हम हो आयें। छुट्टियों के कारण बच्चे घर में हैं और यह सामने ही तो डिस्पेंसरी में जाना है। डाक्टर हमारी पहचान का है। इसीलिये देर न लगेगी। चलो रामकली, अपना दीनानाथ यहीं बैठेगा। अपना दोस्त है आखिर।"

दीनानाथ का उत्तर जाने बिना ही राम सहाय रामकली को लेकर बाहर चले गये। जाने से पहले वह बच्चों से बोले, "तुम्हारे चाचा घर में हैं। हम अभी आ रहे हैं।"

दीनानाथजी सिर थामकर सामने की टूटी चारपाई पर जा बैठे। सारे बच्चे उनकी तरफ ऐसे भागे आये जैसे ढलान की ओर पानी आ जाता है। एक बोला, "चाचा तुम्हारे घर का रास्ता हमें पता है। हम सब आगे से वहां आया करेंगे।"

"हां, हां आना।" दीनानाथजी को कहना पड़ा। तभी दूसरा बोला, "चाचा हमें आप अच्छे लगते हैं, तुम हमारे लिये आम लाये हो ना, मां ने छिपाकर रख दिये हैं। पर देखो, हम कैसे निकालते हैं।" यह कहकर उन्होंने सबसे पास के छोटे कमरे के दरवाजे को जोर-जोर से धक्के देकर तोड़ दिया। वह शायद रसोईघर था। उन्होंने चीनी का बर्तन नीचे फेंका और चीनी बटोर कर खाने लगे। फिर उन्होंने आम उठाये और "मैं खाऊंगा, मैं खाऊंगा" का शोर मचाने लगे। फिर मेरा आम छोटा, तेरा बड़ा है कह कर छीना-झपटी करने लगे और एक दूसरे पर जोरों से आम फेंकने शुरू कर दिये। एक आम सामने बैठे दीनानाथजी की आंख के ऊपर जा लगा और उनकी आंख फूल गई। दीनानाथ गुस्से से गुर्राया कि तभी सामने से दरवाजा खुला। राम सहाय जी अपनी पत्नी रामकली को लिए चले आ रहे थे। अपने बच्चों की हरकतें वे जानते थे। अतः मात्र यह कहकर कि "बच्चे हैं" जोर से बोले, "रामकली चाय बनाना।"



दीनानाथजी एकदम खड़े हो गये और हाथ जोड़कर बोले, "मैं तो जा रहा हूं, चाय इस समय नहीं चाहिये।" तथा रामकली के जवाब की प्रतीक्षा किये बिना ही बाहर निकल गये। तभी पीछे से रामकली चिल्लाई, "अजी दीनानाथजी को समोसे, गुलाब-जामुन तो खिला देते।" राम सहाय ने दीनानाथजी को आवाज लगाई। रामसहाय के तीनों बेटों ने भी पिता का सहयोग देने के लिए कहा, समोसा, चाचा। गुलाब जामुन, चाचा।"

दीनानाथजी विचार कर रहे थे कि अपने मित्र रामसहाय और उसके परिवार की स्थिति पर। उन्हें दया आ रही थी। आह! उनका मित्र पढ़ा-लिखा होने पर भी 'छोटा परिवार-सुखी परिवार' के गुर को न समझ पाया।

—

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

